ओ३म्

परिवार और समाज के नवनिर्माण का साहित्यिक मासिक

शांतिधर्मी

अगस्त-2025

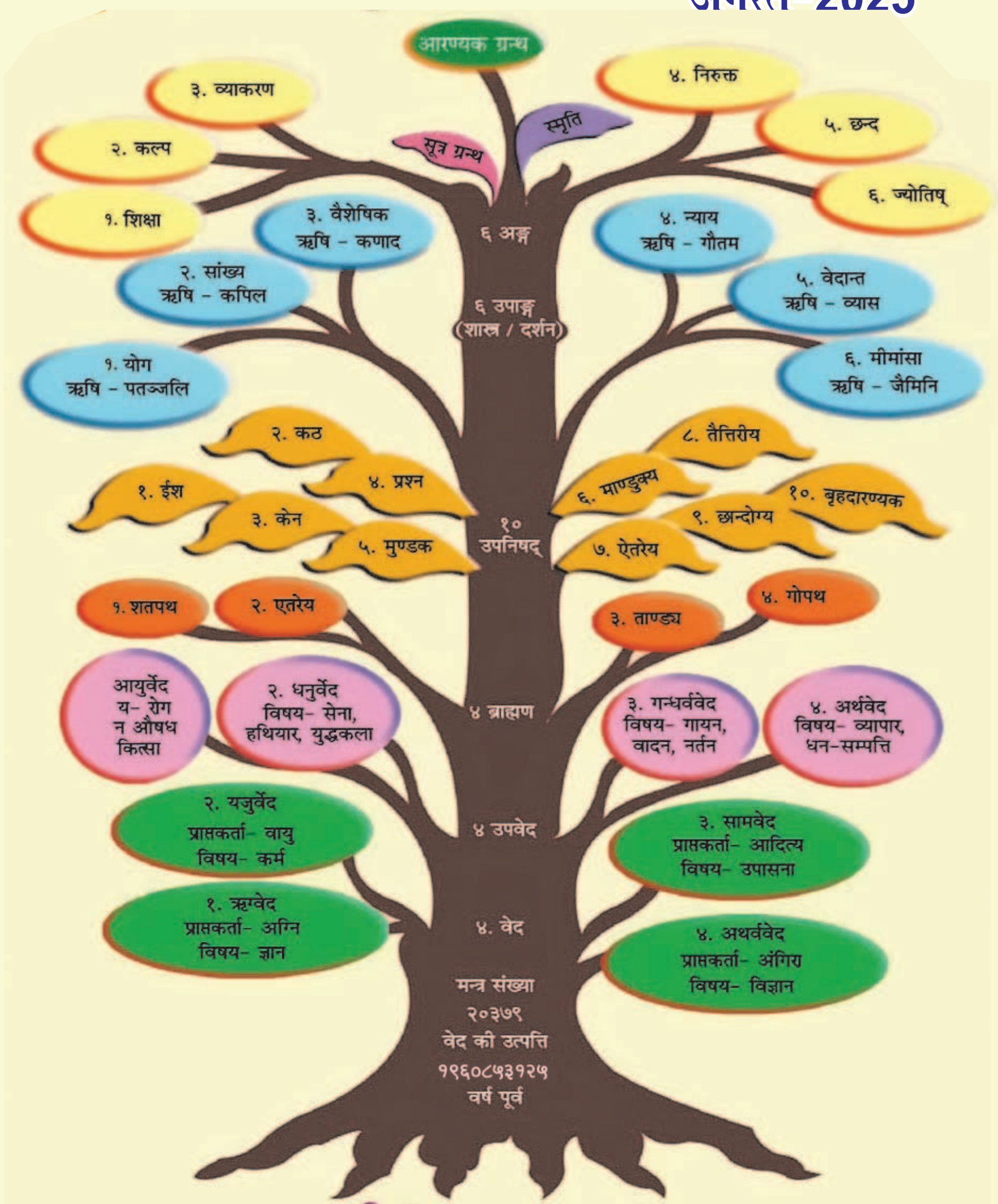

श्रावणी पर्व पर स्वाध्याय का व्रत लें

प्रकाशन का 27वां वर्ष

₹20

प्राणिमात्र के कल्याण की वैदिक भावनाओं से अनुप्राणित

महर्षि दयानन्द निर्दिष्ट मुख्य उद्‌देश्य 'संसार का उपकार' के लिये पूर्ण समर्पित

परिवार और समाज के पुनर्निर्माण का साहित्यिक मासिक

आपका प्रिय शान्तिधर्मी हिन्दी मासिक

शांतिधर्मी का सदस्यता/ग्राहकता सहयोग

प्रिय और सम्मानित पाठक! हम प्रत्येक अंक में सार्थक, सर्वोत्तम, विविधतापूर्ण, विचारपरक अध्ययन सामग्री देने का प्रयास करते हैं। हमने शांति धर्मी की पृष्ठ संख्या भी बढ़ा दी है। आप सब के आशीर्वाद से शांतिधर्मी का विस्तार हो रहा है। पर कुछ पाठकों को साधारण डाक से शांतिधर्मी नहीं प्राप्त हो पाता। इससे हमें भी कष्ट होता है और पाठक को भी असुविधा होती है।

इस समस्या से बचने के लिये पाठकों से निवेदन है कि वे अपनी प्रति पंजीकृत डाक से मंगवायें। पंजीकृत डाक से शांतिधर्मी का सदस्यता/ग्राहकता सहयोग इस प्रकार रहेगा–

एक वर्ष : 500 रुपये (रजिस्टर्ड डाक खर्च सहित)

पाँच वर्ष : 2100 रुपये (रजिस्टर्ड डाक खर्च सहित)

ध्यान दीजिये– हम आपसे एक वर्ष का केवल 200/ और 5 वर्ष का केवल 600/– ही ले रहे हैं। (12 अंकों का रजिस्टरी शुल्क पैकिंग सहित लगभग 336 रुपये बनता है।) क्योंकि हमारा उद्‌देश्य व्यवसाय नहीं, धर्म और राष्ट्रीयता का प्रचार है।)

- 10 या अधिक प्रतियाँ एक स्थान पर मंगाने पर 200/–वार्षिक के हिसाब से अग्रिम राशि भेजें। वाञ्छित प्रतियाँ हर मास पंजीकृत डाक से आपके पते पर भेजी जायेंगी। इस पैकेट का रजिस्टरी खर्च **हम वहन करेंगे**। यदि आप समर्थ हैं तो अपनी ओर से कम से कम दस प्रतियों का वितरण करके यह विद्या का दान अवश्य करें।
- **शिक्षण संस्थाएँ** वरिष्ठ बालकों या स्टॉफ में वितरण हेतु एक वर्ष तक 10 या अधिक प्रतियाँ पंजीकृत डाक से मँगायें।
- नई आजीवन सदस्यता हम बंद कर रहे हैं। 20 वर्ष तक पुराने सदस्य सदस्यता का नवीनीकरण अवश्य कराकर सहयोग करें।
- जिन आदरणीय पाठकों को उनकी प्रति साधारण डाक से मिल रही है, उनके लिये वार्षिक शुल्क 200/ ही है। **लेकिन वे कृपया पत्रिका न पहुंचने पर हमारे साथ अनावश्यक विवाद न करें। रजिस्टरी से भेजने पर हमारा श्रम और खर्च बढ़ता है तथापि हम चाहते हैं कि हमारे प्रिय पाठकों को पत्रिका नियमित रूप से प्राप्त हो।**
- ग्राहकता से संबंधित किसी भी जानकारी के लिये कृपया व्हाट्सएप या फोन करें–

094162 53826 भवदीय, **सम्पादक मण्डल**

शांतिधर्मी का ग्राहकता शुल्क जमा कराने के लिये स्कैन करें

साधारण डाक से : एक वर्ष 200/–

पंजीकृत डाक से : एक वर्ष : 500/–

पाँच वर्ष : 2100/–

कृपया राशि जमा कर अपना पता व्हाट्स एप करें– 9416253826

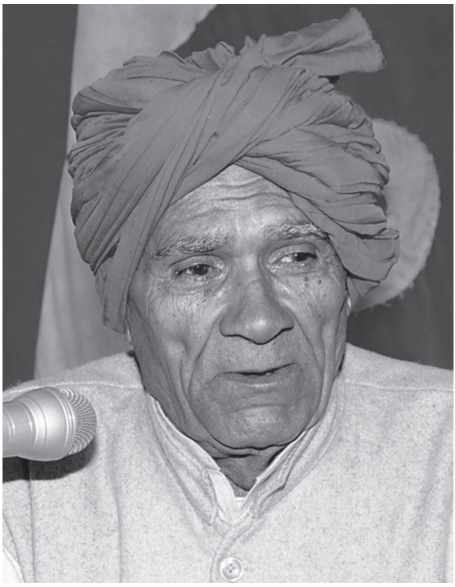

संस्थापक एवं आद्य सम्पादक

पं० चन्द्रभानु आर्य भजनोपदेशक (स्व०)

— — — — — — — — —

●सम्पादक

सहदेव समर्पित

94162 53826, 99963 38552

●उपसम्पादक

सत्यसुधा शास्त्री

●विधि परामर्शक :

डॉ० नरेश सिहाग 'बोहल' एडवोकेट

●कार्यालय व्यवस्थापक

रवीन्द्रकुमार आर्य

सहयोग राशि

एक प्रति	:	२०.०० रु०
वार्षिक	:	२००.०० रु०
दस वर्ष	:	१५००.०० रु०

●सहयोग राशि खाते में जमा कराने के लिये 99963 38552 (व्हाट्स एप) पर सम्पर्क करें।

●उक्त सहयोग राशि में साधारण डाक खर्च सम्मिलित है। साधारण डाक से पत्रिका न मिलने पर हमारी कोई जिम्मेवारी नहीं है। यदि आप अपनी प्रति रजिस्टरी से मंगाना चाहते हैं तो एक वर्ष के लिये 300 रुपये अतिरिक्त जोड़कर भेजें।

ओ३म्

शं नो मित्रः शं वरुणः शं नो भवत्वर्यमा।

परिवार और समाज के नवनिर्माण का मासिक

शान्तिधर्मी

प्रकाशन का सताईसवाँ वर्ष

अगस्त, २०२५ ई०

वर्ष २७, अंक : ७, श्रावण, 2082 विक्रमी

सृष्टि सम्वत् 1960853126, दयानन्दाब्द : 201

अन्तर्यात्रा

चौमंजिला (सामवेद अनुशीलन) **६**

संस्कृति ही विकास है (शांतिप्रवाह पुनर्प्रकाशन) ७

आओ पुस्तकों से दोस्ती करें (प्रेरणा) ९

राष्ट्र का स्वरूप क्या है? (स्वाधीनता दिवस) १२

योगेश्वर श्रीकृष्ण की प्रासंगिकता (जन्माष्टमी) १५

रामकथा में प्रक्षेप : संदर्भ विशेष : अग्नि परीक्षा (अन्वेषण) १८

ऋग्वेद का चतुर्थ सूक्त (आओ वेद पढ़ें-५) **२४**

प्रभु, मुझे वाणी की मधुरता प्रदान कीजिये (आत्म विकास) २७

मुंशी प्रेमचन्द के साहित्य पर आर्यसमाज का प्रभाव (शोध) **२९**

कारगिल के बलिदानी कैप्टन मनोज पाण्डेय **३२**

कब्ज के मुख्य कारण (स्वास्थ्य चर्चा) ३१

कविता :- ८, २८, ३२, ३४, ३७, ३८ **बालवाटिका**-३६, **भजनावली**-३५, प्रेरक वचन, प्रेरणा पथ, कड़वे मीठे बोल, बिन्दु बिन्दु विचार, समाचार सूचनाएँ **साथ ही –** संस्कृत भाषी गांव, आर्यसमाज की विजय, पण्डित चन्द्रभानु आर्य के संस्मरण, मनुस्मृति में मांसभक्षण निषेध--

कार्यालय :

सम्पादक शांतिधर्मी, **पो बाक्स नं० 19**

मुख्य डाकघर जींद 126102

७५६/३, आदर्श नगर, सुभाष चौक, जीन्द–१२६१०२ (हरि०)

दूरभाष : 9996338552

ईमेल- **shantidharmijind@gmail.com**

पूर्ण सम्पादक मण्डल अवैतनिक है। पत्रिका में व्यक्त लेखकों के विचारों से सम्पादक मण्डल का सहमत होना अनिवार्य नहीं है। किसी भी प्रकार के विवाद का न्याय क्षेत्र जीन्द होगा।

❑सहदेव समर्पित

आर्यसमाज की विजय

●पानीपत जिला के बापौली गाँव में लगभग एक शताब्दी से स्थापित आर्यसमाज पर संकट के बादल छाये तो हरियाणा के बाहर के पाठकों ने दूरभाष पर आश्चर्य प्रकट किया कि हरियाणा जैसे राज्य में यह हो रहा है। व्यक्तिगत प्रतिस्पर्धा के कारण कुछ लोगों ने आर्यसमाज के स्थान को समाप्त करने का प्रयास किया, स्थानीय कार्यकर्ताओं ने आर्यसमाज के स्थान की रक्षा के के लिये छुरियों, लातों के प्रहार सहे। संघर्ष रंग लाया। आर्यसमाज के सर्वोच्च नेताओं ने त्वरित संज्ञान लिया और इस मामले का सुखद पटाक्षेप हो गया।

●आर्यसमाज की विजय का अर्थ है-समाज की विजय। समाज की विजय इन अर्थों में कि आर्यसमाज के जाग्रत रहने में ही समाज का सम्पूर्ण हित निहित है। आर्यसमाज कोई बाहरी तत्त्व नहीं है। उसी गांव, समाज के लोग आर्यसमाज के कार्यक्रम से प्रभावित होते हैं और सर्वहित की भावना से समाज को अपना परिवार समझकर जीवन को ऊँचा उठाने वाली बातों का प्रचार करते हैं। बसने-बसाने की बातें, सन्तान के निर्माण की बातें, बड़ों के सम्मान की बातें, भेदभाव, ऊंच-नीच, जातिवाद को समाप्त करने की और मानव को मानव से जोड़ने की बातें।'संसार का उपकार करना' ही आर्यसमाज का मुख्य एजेण्डा है।

●हम उन लोगों की बात नहीं करते जो समाज का विघटन करना चाहते हैं। हम उन बहुत से लोगों की बात कर रहे हैं कि जिनको इस बात का अनुभव है कि आर्यसमाज बढ़ता है तो समाज में सकारात्मक बदलाव आता है। आर्यसमाज कमजोर होता है तो समाज बिगड़ता है।

●एक पुराने आर्यसमाज गांव के मित्र ने कहा कि पहले गांव में बहुत से आर्य प्रचारक आते थे, अब नहीं आते। आर्यसमाज अपना वह काम नहीं कर रहा है। मैंने उन मित्र से निवेदन किया कि आर्यसमाज कौन है? हम आप ही तो आर्यसमाज हैं। हमारे आपके पूर्वजों ने सुधार में रूचि ली तो उन्होंने व्यवस्था की और वे आये। आप तीन आदमियों की साधारण भोजन और ठहरने की व्यवस्था करो, वे आयेंगे। बताओ किसको बुलाना है? सभा तो अब अपने सुव्यवस्थित वाहन में प्रचारकों को भेजती है। खर्च की भी आपको चिन्ता नहीं। माइक तक वे अपना लेकर आते हैं। समाज को उठाने की बात करने आते हैं। जो लोग बुला रहे हैं, वे सहयोग बढ़ा भी रहे हैं और समाज सुधार की अलख भी जगा रहे हैं। यह ठीक है कि अब बिना बुलाये जाने वाले प्रचारकों की पीढ़ी समाप्त हो गई। पर वे प्रचारक भी तो आप ही हैं। यहाँ किसानों ने दिन में हल चलाकर रातों को प्रचार किये हैं, दुकानदारों ने रातों को गांव-गांव में अलख जगाई है। यहाँ तक कि दिन में जूतियाँ बनाकर रातों को प्रचार कार्य किया है। (महाशय शिवदत्त जी)

●आर्य समाज के कमजोर होने का अर्थ है हर उस व्यक्ति का कमजोर होना जो समाज में कुछ सकारात्मक योगदान देना चाहता है। पूर्वजों के, ऋषियों के उत्तम विचारों से प्रेरित होकर कोई व्यक्ति अच्छा काम करता है तो यह आर्यसमाज की विजय ही है। आर्यसमाज कोई गुरुडम थोड़े ही है कि वह यह गिनेगा कि उसने कितने नामदान दे दिये। आर्यसमाज के प्रचार में सौ दो सौ व्यक्ति आये। प्रचार सुनकर दो अच्छी बातें ग्रहण कर चले गये। उनमें से यदि दो-चार ने उन अच्छी बातों का प्रचार बढ़ाने का निश्चय कर लिया तो आर्य समाज बढ़ा। सन्तानों को शिक्षित करने लगे। पाखण्ड, अंधविश्वास से दूर हटने लगे। उनमें से कुछों का भाग्योदय हुआ तो स्वाध्याय के बल पर विद्वान् हो गए। कौन थे वे लोग? कहीं बाहर से आये थे? नहीं, हमारे अपने, हम लोग ही तो थे। अब हमारी प्राथमिकतायें बदल गईं तो समाज पर इसका प्रभाव भी साफ दिखाई देने लगा।

●अपने घरों में, अपने मुहल्लों में आर्यसमाज स्थापित करो। आज इस पतन के युग में भी आर्यसमाज जैसा सच्चा और नि:स्वार्थ सुधारक और कोई नहीं है। समाज का आर्य बनना ही आर्यसमाज है और यही आर्यसमाज की विजय है। स्वामी दयानन्द ने कहा था- यदि सुख चाहते हो तो आर्यसमाज के साथ मिलकर काम करना स्वीकार करो, अन्यथा कुछ भी हाथ नहीं लगेगा।

आपकी सम्मतियाँ

शांतिधर्मी का जुलाई, 2025 का अंक मिला बहुत-बहुत शुक्रिया ! मुख्य पृष्ठ पर प्रख्यात एवं सम्मानित समाजसेवी, दीनबंधु स्वर्गीय चौधरी मित्र सेन आर्य की सहधर्मिणी, स्वर्गीय माता परमेश्वरी देवी का चित्र समाज सेवा के लिए प्रेरणादायक लगा। आत्म चिंतन में संपादकीय 'ईश्वर की स्तुति और निंदा' लाजवाब है। संपादकीय के अनुसार जो ईश्वर को मानते हैं, उनके मन, कर्म और वचन में समानता होती है। ईश्वर सर्वत्र तथा सर्वशक्तिमान है। वह कहीं भी मिल सकता है, बात सिर्फ हमारे एहसास की है। संसार ईश्वर के द्वारा रचा गया है। सब कुछ उसकी व्यवस्था के अनुसार होता है। ईश्वर अपना काम जानता है। आमतौर पर जब कुछ हमारी इच्छा के अनुसार होता है तो हम ईश्वर के अस्तित्व को मानकर उसकी प्रशंसा करते हैं और अगर उसके मुताबिक नहीं होता तो हम परमात्मा की निंदा करते हैं। परमात्मा ने हमें सुंदर शरीर और बुद्धि दी है। इसका इस्तेमाल कर जीवन को पवित्र बनाने का प्रयत्न करना चाहिये। पंडित चंद्रभानु आर्य जी का लेख 'आस्तिकता जीवन का आधार है' ज्ञानवर्धक तथा जीवन का मार्गदर्शन करने वाला है। सत्यदेव प्रसाद आर्य मरुत् की कविता दुख सुख में परमात्मा के प्रति भरोसा बढ़ाने वाली है। आचार्य सोमदेव आर्य का लेख 'मोक्ष का मार्ग अत्यंत कठिन है' प्रेरक है। सतीश कुमार की रचना काबिले तारीफ है। बारू राम मलिक का लेख ज्ञानवर्धक तथा उपयोगी है। आचार्य भगवान देव, देवनारायण भारद्वाज, सहदेव समर्पित के लेख प्रेरक और आचरणीय हैं। महिपाल आर्य का लेख 'पुनर्जन्म क्यों और कैसे?' जानकारी बढ़ाने वाला है। बाल वाटिका बहुत पसंद आई। अंक की अन्य रचनाएं भी संग्रहणीय हैं।

प्रोफेसर शाम लाल कौशल
मोबाइल--9426359045
रोहतक--124001 (हरियाणा)

शांतिधर्मी अपनी परंपरा अनुसार सुंदर कलेवर तथा अति उपयोगी विषयों में व्यवस्थित कालम के साथ प्राप्त हुई। ईश्वर के मानवीकरण पर बढ़ती नास्तिकता पर चिंतित, अद्वितीय आलेख 'आस्तिकता जीवन का आधार', 'मोक्ष का मार्ग अत्यंत कठिन' उन लोगों पर यथार्थ टिप्पणी करता है, जो बिना पुरुषार्थ मोक्ष प्राप्त करना चाहते हैं। पुनर्जन्म क्यों और कैसे? -ये तीनों लेख, मात्र पठनीय ही नहीं, मनन करने योग्य हैं। ऋग्वेद का तृतीय सूक्त, इन्द्र के हृदय में -सद्भावनाओं के सोमकलश के साथ प्रस्तुति, बहुत सुंदर व्याख्या, दोनों आलेख बहुत महत्वपूर्ण, जो संग्रहणीय भी हैं। 'भारतीय शिक्षा का सर्वनाश' अंग्रेजो द्वारा भारतीय संस्कृति को नष्ट करने की साजिश का खुला चिट्ठा है, अफसोस तो इस बात का है इतने समय तक भी वही ढर्रा चल रहा है। पाठक स्वयं इस पर विचार अवश्य करें। जातिभेद विनाशक आर्य समाज, पेड़ों पर उगते पेड़े, प्रेरक वचन, प्रेरणा पथ, भुलाते रहे, कड़वे मीठे बोल, राहों में खुशियां बिछाते चलें, अति उत्तम रचनाएं, सभी रचनाकारों को हृदय से बधाई। साइबर अपराध, सावधानी ही बचाव है व एक अनोखा तलाक दोनों लेख और कहानी जीवन की खुशियों का पैगाम देते हैं, पाठक इन्हें सदैव मस्तिष्क में संग्रह कर रखें। 'ईश्वर की स्तुति और निंदा' ईश्वर सर्वव्यापी है, मनुष्य से पृथक् है, दोनों के कार्य अलग-अलग हैं, लेकिन ईश्वर को मानव की तरह समझने वालों के लिए लेख कंबल में लपेटकर धुलाई करने से कम नहीं है, लेखक को बधाई न देना दृष्टता ही होगी। धन्यवाद।

डॉ. विजय कुमार पाठक (9407169323)
जी 93, एल आई जी, ऋषि नगर, उज्जैन (म. प्र.)

शांतिधर्मी का जुलाई अंक देखा, पढ़ा। मेरे वैदिक गुरु पंडित देवनारायण भारद्वाज जी का लेख 'पेड़ों पर उगते पेड़े' शान्तिधर्मी पत्रिका जुलाई 2025 अंक में पुन: प्रकाशित कर आपने स्वाध्याय प्रेमियों के लिए अनुपम उपहार दिया है। सभी इससे लाभान्वित होंगे। धन्यवाद जी। सभी लेख स्वाध्याय योग्य है। अति सुन्दर पत्रिका है। उत्तम सम्पादन के लिये आभार और शुभकामनायें।

राजेन्द्र आर्य (9041342483)
20-सी, ब्लॉक बी, चिमनी हाइट्स के सामने
दयालपुरा, जिरकपुर, मोहाली-140603

पाठक अपनी सम्मति, सुझाव, सूचनाएँ
व्हाट्सएप- 9996338552, 9416253826
पर भेज सकते हैं।

अनुशीलन : सामवेद : पावमान पर्व

द्वितीय सवन वीर तरंग (नवमः खण्डः) जगती छन्दः । निषादः स्वरः॥

व्याख्याकार : पण्डित चमूपति जी

चौमञ्जिला

त्रिरस्मै सप्त धेनवो दुदुह्रिरे सत्यामाशिरं परमे व्योमनि।
चत्वार्यन्या भुवनानि निर्णिजे चारूणि चक्रे यदृतैर्वर्धत।।7।।

ऋषिः -रेनुः = स्तोता।

(सप्त धेनवः) सात दुधेल-गायें [तो पहिले ही] (त्रिः) तीन-तीन बार (अस्मै) इस (परमे व्योमनि) विस्तृत अन्तरिक्ष में (सत्यां आशिरम्) सत्य-रूप दूध (दुदुहिरे) दे रही थीं। (यत् ऋतैः अवर्धत) जब इस के ज्ञान में ऋत की वृद्धि हुई तो इसने (निर्णिजे) इस दूध के परिष्कार के लिए (अन्या चत्वारि भुवनानि चक्रे) अन्य चार भुवन बना लिए-मंजिलें बना लीं।

यह विस्तृत विश्व इन्द्रिय-रूपी गायों की चरने की स्थली है। इस विशाल क्षेत्र के तृण-तृण में दूध छलक रहा है। इन्द्रियाँ इन तिनकों को खाती हैं, पचाती हैं और आत्मा के मुख में ज्ञान-रूपी दूध का सोता बहाती हैं। सात गायें— दो आँखें, दो कान, दो नासिकाएँ, एक मुख—हर समय इस खेत में चर रही हैं और जागृति, स्वप्न तथा सुषुप्ति— इन तीन समयों में मनुष्य के मस्तिष्क में भिन्न-भिन्न प्रकार की ज्ञान-गंगा बहा रही हैं। जागृति और स्वप्न में प्रत्यक्ष चिति (Conscious self) काम करती है तो सुषुप्ति में परोक्ष चिति (Subconscious self)।

दूध का यह झरना हर समय झर रहा था। पर इससे आत्मा की सन्तुष्टि नहीं थी। सत्य में प्रकाश था पर सूखा। ऐन्द्रिय ज्ञान बाहर की वस्तु थी। तर्कणा की कैंची कतर-कतर कर इसके टुकड़े-टुकड़े कर देती थी। इसकी अपनी कोई शकल सूरत नहीं थी।

जब से अंदर की आँख खुली है, सत्य में ऋत की वृद्धि हो गई है। ऐन्द्रिय ज्ञान पर एक आध्यात्मिक आलोक-सा आ गया है। चतुष्पाद ओम् के ध्यान से मानो उस ज्ञान के परिष्कार की चार मंजिलें-सी निर्मित हो गई हैं। जागृति अब भी जागृति है परन्तु वह पहले की सी जागृति नहीं। इस जागृति में आध्यात्मिक छटा है। ऐन्द्रिय प्रत्यक्ष आध्यात्मिक प्रकाश द्वारा आलोकित है। इसमें एक अलौकिक ज्योति है। यही अवस्था स्वप्न और सुषुप्ति की है। दूध छन गया है। स्वयं इन्द्रियों के अनुभव में अब अधिक पवित्रता है, एक अद्भुत रस है, एक विचित्र आभा है। इन तीन मंजिलों से आगे एक चौथी मंजिल अपाद प्रभु की है—अमात्र अक्षर की। वह ला-मकान का मकान है। उस स्थिति का माप नहीं, तोल नहीं। वह असम्प्रज्ञात अवस्था है। चतुष्पाद का चौथा पाद अपाद है। उस अमूर्त शब्द का उच्चारण नहीं हो सकता। वह स्थिति वाणी तो क्या? कल्पना का भी विषय नहीं बनाई जा सकती। अध्यात्म की इन चार चलनियों में से छन-छन कर सत्य ऋत हो जाता है। वही वास्तविक ज्ञान है। उसे प्राप्त कर आत्मा अमर-पद को प्राप्त हो जाता है। यही सन्त की ऋतम्भरा बुद्धि है। सन्त इसी चौमंजिले में रहता है।

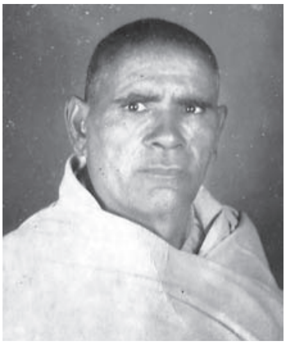

शान्तिप्रवाह (पुनर्प्रकाशन)

फरवरी 1999 ई. से दिसम्बर 2014 तक के सम्पादकीय अग्रलेख

❑**स्व. पं. चन्द्रभानु आर्य भजनोपदेशक**

संस्थापक एवं आदि सम्पादक शान्तिधर्मी

●●●

संस्कृति ही विकास है

हमारी परम्परा का कोई भी धार्मिक मामला आर्थिक मामला भी है, सामाजिक भी और राष्ट्रीय भी।

आर्थिक विकास, महंगाई आदि ऐसे विषय हैं, जिनसे जनता सर्वाधिक प्रभावित होती है। ऐसे में कुछ लोगों को परम्परा, संस्कृति और विरासत की बात करना बुरा लग सकता है। पर वास्तव में देश का आर्थिक विकास भी परम्परा में ही निहित है। परम्परा और संस्कृति के बिना आर्थिक विकास की बात दिवास्वप्न की तरह है। वस्तुतः आजादी के बाद विकास के नाम पर देश के लोगों को छला गया है। मैं नीयत की बात नहीं करता, पर यह अवश्य है कि देश के नीति निर्माताओं के मन में अपनी परम्पराओं के प्रति हीन भावना अवश्य थी।

महर्षि दयानन्द ने कहा– कृषक राजाओं के भी राजा हैं। महात्मा गांधी ने कहा– भारत गांवों में बसता है। हमारी परम्परा में गांव एक सामाजिक ही नहीं, आर्थिक ईकाई भी थी, जो पूर्ण रूप से स्वावलम्बी थी। जिसमें कारीगर भी थे, उत्पादक भी थे। जब अंग्रेजों ने इस देश के कच्चे माल को नाममात्र के दामों में खरीदना और मानचैस्टर से लाकर पक्के माल को मुंह मांगे दामों में बेचना शुरु कर दिया तो देश ने विदेशी कपड़ों की होली जलाई थी। हमारे कारीगर नष्ट कर दिये थे। वही नीति देश की आजादी के बाद भी जारी रही। आज गांव की आर्थिक ईकाई नष्ट हो चुकी है। गांव के कपड़ा, चमड़ा, मिट्टी, लकड़ी, लोहा, आभूषण, गुड़ उद्योग बंद हो चुके हैं। गांव का मजदूर मजदूरी करने के लिए शहर जाता है। गांव का कृषक बीज खाद लेने के लिए शहर जाता है। गांव का पशुपालक शहर से घी खरीदता है। विकास के नाम पर हमारा स्वाभिमान भी नष्ट हो गया और स्वावलम्बन भी। स्वरोजगार समाप्त होने से नौकरी चाहने वालों की लम्बी लाईन लग गई।

देश के आर्थिक विकास का अर्थ है देश की बहुसंख्यक जनता का आर्थिक विकास। भारत गांवों में बसता है और भारत का मुख्य व्यवसाय कृषि है। एक सीधा सा सवाल है कि जब आजादी के बाद देश में अन्न का उत्पादन बढ़ा है तो इतनी महंगाई क्यों बढ़ी है? जिस अनुपात में कृषि की लागत बढ़ी है, उस अनुपात में कृषक की आय नहीं बढ़ी है, जिस अनुपात में अन्न के मूल्य बढ़े हैं, उस अनुपात में श्रमिक की आय नहीं बढ़ी है। कृषक की आय बढ़ नहीं रही, श्रमिक को खाने को अन्न नहीं मिल रहा! आखिर इस उत्पादन को खा कौन रहा है? और यह विकास किसके लिए हो रहा है?

वस्तुतः कृषि का विकास हमारी परम्परा में निहित है। कृषि को अरब देशों के तेल से चलने वाली मशीनें और सरकारी कारखानों में बनने वाली खाद नहीं चाहिए, कृषि को गाय चाहिए। जब से कृषक गाय से दूर हुआ है, तभी से वह अभाव के कारण आत्महत्या करने को विवश हुआ है। गाय को काट डाला, मार डाला, डब्बों में बंद कर करके विदेशियों को खिला दिया गया, जैसे कृषक का हाथ कट गया। गाय के मामले को धार्मिक और साम्प्रदायिक मामला बनाकर उलझा दिया गया।

वस्तुतः हमारी परम्परा का कोई भी धार्मिक मामला आर्थिक मामला भी है, सामाजिक भी और राष्ट्रीय भी। स्वामी दयानन्द ने विशुद्ध आर्थिक रूप से गाय की उपयोगिता का गणितीय आकलन किया है। एक गाय अपने जीवन में 25740 लोगों का पेट भर सकती है। यह गणना केवल दूध और उससे बने पदार्थों की है। गाय के

गोबर से जो खाद बनती है, और गाय के बछड़े जो हल चलाते हैं, उनका गणित लगाया जाए तो गाय अकल्पनीय उपकार करती है। गाय का गोबर भारतीय भूमि के लिए सर्वोत्तम खाद है और सर्वोत्तम कीटनाशक भी। विषैली तथा महंगी खाद समय पर नहीं मिलती, भूमि की उर्वरा शक्ति को नष्ट करती है।

गुरुकुल कुरुक्षेत्र में गोवंश के विकास के लिए बहुत अच्छा अनुसंधान कार्य हो रहा है। अभी हाल ही में यहाँ 'शून्य लागत प्राकृतिक खेती प्रशिक्षण शिविर' का आयोजन किया गया। इसमें अमरावती से पधारे कृषि वैज्ञानिक सुभाष पालेकर ने बताया कि किस प्रकार किसान प्राकृतिक खेती अपनाकर समृद्ध बन सकते हैं। पालेकर ने जानकारी दी कि किसान एक देसी गाय के गोबर व मूत्र से 25 एकड़ भूमि में बिना किसी अतिरिक्त खर्च के खेती कर सकते हैं। एक विदेशी नस्ल की गाय के गोबर में 78 लाख जीवाणु होते हैं जबकि देसी गाय के गोबर में जीवाणुओं की संख्या तीन करोड़ होती है। उन्होंने बताया कि कृषि के लिए गाय के गोबर से बड़ी कोई चीज इस संसार में नहीं है। इसमें भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ाने के साथ साथ रोगों के निवारण की भी अपार शक्ति है। गाय के गोबर की खाद में कृषि में सहायक जीवांश विद्यमान रहते हैं। यदि किसान कृषि के साथ गोपालन भी करेंगे तो निश्चित रूप से अतिरिक्त आय प्राप्त करेंगे।

प्राकृतिक खेती में न तो रासायनिक खाद की आवश्यकता होती है और न कीटनाशकों की। कृत्रिम खेती ने हमारी प्राकृतिक खेती मार डाली, रासायनिक खाद ने देसी खाद को रास्ते से हटा दिया। कीटनाशकों ने हमारे प्राकृतिक कीटनाशक पक्षी मार डाले-- देश का सबसे बड़ा व्यवसाय पराधीन हो गया।

आर्थिक विकास के लिए परम्परा को सम्मान और समुचित स्थान देना ही सर्वोत्तम विकल्प है। इस पर भी आर्थिक विकास देश की प्रगति का लक्षण मात्र है। विकास का मूल तो विद्या का विकास है, चरित्र का विकास है, राष्ट्रीय स्वाभिमान का विकास है। यदि हम इस विकास की उपेक्षा करेंगे तो भौतिक विकास भी हमें समृद्ध नहीं कर पायेगा।

हे ईश्वर! आभार तुम्हारा!

मात पिता गुरु श्रेष्ठ दिए अरु उत्तम कुल की उज्ज्वल धारा ।
हे ईश्वर आभार तुम्हारा!

भारत जैसी भूमि सुपावन दिव्य सनातन में अवतारा।
हे ईश्वर आभार तुम्हारा!

कह कर स्वर कोकिल-कोकिल इस कवि कुनबे ने खूब दुलारा।
हे ईश्वर आभार तुम्हारा!

श्रेष्ठ नहीं अति श्रेष्ठ नहीं पर कुछ तो है मुझमें भी न्यारा।
हे ईश्वर आभार तुम्हारा!

जीवन की लघुता में कविता भरकर सागर-सा विस्तारा।
हे ईश्वर आभार तुम्हारा!

थोड़ा-सा मांगा था मैंने दे डाला सारे का सारा ।
हे ईश्वर आभार तुहारा!

❐पुष्पलता आर्य,
चरखी दादरी
(9416918577)

प्रेरणा

आओ पुस्तकों से दोस्ती करें

-डॉ. धर्मदेव विद्यार्थी
(निदेशक हरियाणा साहित्य अकादमी)

दुनिया में पुस्तक से अच्छा कोई दोस्त नहीं है। दोस्त धोखा दे सकता है, पुस्तक कभी धोखा नहीं देती। किस पुस्तक की कौन सी लाइन जीवन को बदल दे यह किसी को पता नहीं, पर पुस्तक की वह लाइन ढूंढने के लिए पुस्तकों से दोस्ती करनी जरूरी है।

एक जमाना था जब प्रत्येक घर में रामायण, महाभारत, वेद, उपनिषद, पुराण इत्यादि में से कोई एक पुस्तक जरूर घर में होती थी परंतु आज ऐसे बहुत कम घर हैं जिनमें पुस्तकें पाई जाती हैं। यदि हम बाजारों में नजर दौड़ाएं तो हमें पाठ्यक्रम से संबंधित स्टेशनरी की दुकान तो दिखाई देंगी परंतु ऐसी दुकान नहीं दिखाई देगी जिसमें सामान्य पुस्तकें उपलब्ध हों।

सभी लोग अपनी संतान को संस्कारवान् बनाना चाहते हैं परंतु यह कोई नहीं सोचता कि संस्कार डालने का माध्यम क्या हो? माता-पिता दोनों नौकरी करते हैं, संयुक्त परिवार व्यवस्था समाप्त प्राय: है। दादा-दादी, नाना नानी की कहानियां इतिहास बन गई हैं। पुस्तक घर में कोई नहीं रखता तो विचारिए कि संस्कार कहां से आएंगे?

मैं अपने विद्यालय के दिनों के दो प्रसंग यहाँ रख रहा हूँ। एक दिन एक सज्जन अपने बेटे को छुट्टी दिलवाने के लिए मेरे कार्यालय में आए। उन्होंने बताया कि वे दुबई में इंजीनियर हैं। उन्होंने कहा कि उन्हें अपने बच्चों के लिए 10 दिन का अवकाश चाहिए। मैंने उनकी बात सुनने के पश्चात् उन्हें कहा कि वे एक प्रार्थना पत्र लिखकर दे दें। वे स्थिर भाव से बैठे रहे। मैं समझा कि उन्हें प्रार्थना पत्र लिखने के लिए पेपर और पेन की जरूरत होगी। मैंने पेपर और पेन उन्हें दे दिया और प्रार्थना पत्र लिखने का आग्रह किया। उन्होंने कहा कि उन्हें लिखना नहीं आता। मेरे लिए यह आघात जैसा था कि एक इंजीनियर का उत्तर ऐसा होगा। मेरे प्रश्न करने पर उन्होंने बताया कि वे सब कार्य कंप्यूटर पर करते हैं इसीलिए लिखने की जरूरत ही नहीं पड़ती। इस कारण हैंड राइटिंग ऐसी हो गई है कि वह पढ़ी नहीं जा सकती। दूसरे प्रसंग में मैं याद दिलाना चाहूंगा कि पहले विद्यालय और महाविद्यालय में पुरस्कार में पुस्तकें दी जाती थीं। एक दिन मैंने अपने विद्यालय के शिक्षकों को वार्षिक उत्सव में बच्चों को पुरस्कार स्वरूप पुस्तकें देने का विचार रखा। यह विचार सुनकर सभी शिक्षक और शिक्षिकाओं के चेहरे ऐसे हो गए जैसे कोई कुनैन की गोली खा ली हो। किसी ने कहा कि किताबें कौन पढ़ता है? किसी ने कहा लोग क्या कहेंगे? यह भी कोई पुरस्कार है! आदि आदि। अब जब शिक्षकों की पुस्तकों के प्रति ऐसी रुचि हो तो फिर पुस्तक कौन पढ़ेगा? पुरस्कारों में सभी मोमेंटो देना चाहते हैं। अब यह मेंमेंटो जिसको जीवन में एक आध बार मिलता है, वह उसे प्रिय लगता है। जिनके पास अनेक मोमेंटो होते हैं वे यह सोचते हैं कि इनका करें तो क्या करें क्योंकि उनका कोई भी उपयोग नहीं हो सकता। यह अद्भुत खोज जिस किसी ने भी की उसे व्हाट्सएप यूनिवर्सिटी की तरफ से 11 तोपों की सलामी देनी चाहिए!

शिक्षक सबसे अधिक पुस्तकों के नजदीक रहते हैं, परंतु विरले ही ऐसे शिक्षक होते हैं जो अपनी कक्षा के अतिरिक्त किसी दूसरी पुस्तक को पढ़ते होंगे। विद्यालयों और महाविद्यालयों के पुस्तकालय खाली नजर आते हैं। बहुत सी पुस्तकों को कोई पढ़ता ही नहीं। स्कूल और कॉलेज में आने वाली बहुत सी मैगजीन और समाचार पत्रों के पिन तक कोई नहीं खोलता।

धर्म ग्रंथों और दूसरे सामाजिक विषयों से संबंधित पुस्तकें तो कोई पढ़ता ही नहीं। एक बार जब मैं रेवाड़ी में था, तब एक सेशन जज ने मुझे कहा कि वे वेद देखना चाहते हैं। मैं उनके साथ बहुत सारे विद्यालयों और महाविद्यालयों में गया, परंतु कहीं भी वेद नहीं मिले? उनका बार-बार एक ही प्रश्न था कि संस्कृति बचेगी तो कैसे बचेगी? जिस देश के बच्चों ने ज्ञान के आधार वेद के दर्शन ही नहीं किए उनसे

ज्ञान की कितनी आशा की जा सकती है?

हमारे देश में लेखकों और कवियों के द्वारा पुस्तकें तो लिखी जाती हैं। उनमें से कुछ पुरुषार्थ करके प्रकाशित भी करवा लेते हैं, परंतु बेचने का कोई साधन नहीं होता। उनमें से अधिकांश पुस्तक दोस्त मित्रों को नि:शुल्क दी जाती हैं। जिन्हें नि:शुल्क दी जाती हैं वे उसकी कोई कीमत ही नहीं समझते। लेकिन मेरा यह मानना है कि पुस्तक यदि किसी के घर में रहेगी तो कभी न कभी, कोई तो पढ़ेगा। पूरी नहीं तो आधी पढ़ेगा। यदि आधी नहीं तो एक पृष्ठ तो जरूर पढ़ेगा। और जब पढ़ेगा तो चिंतन मनन भी करेगा। जब चिंतन करेगा तो जीवन में कुछ आदर्श कर्म भी करेगा।

मेरी उन सभी बहनों और भाइयों से प्रार्थना है जो साहित्य और संस्कृति को जीवंत देखना चाहते हैं कि वे आगे आकर एक साहित्यिक वातावरण का निर्माण करें। यदि आप माता-पिता हैं तो अपने बच्चों के जन्मदिवस पर बच्चों को कोई न कोई प्रेरणादायक पुस्तक जरूर भेंट करें। अन्य जो उपहार आप देना चाहें वह भी दीजिए परंतु कोई पुस्तक भी जरूर दीजिएगा। यदि आप अध्यापक या प्राचार्य हैं तो अपने होनहार बालकों को पुरस्कार देते समय पुस्तक देना न भूलें। विद्यालय और महाविद्यालय में वार्षिक उत्सव पर लाखों रुपए खर्च किए जाते हैं। कुछ सौ रुपए पुस्तकों पर भी खर्च हो जाएंगे तो फलदायी होंगे। यदि आप धार्मिक संगठन से जुड़े हैं, भले ही वह माता का जागरण हो, तो उस समय पुस्तक विक्रेताओं की एक दुकान जरूर लगवाएं। यदि आप पुस्तक विक्रेता हैं तो स्कूलों, कॉलेजों और धर्म स्थानों व मेलों पर पुस्तक प्रदर्शनी तथा पुस्तक विक्रय केंद्र जरूर स्थापित करें! यदि आप युवा हैं तो अपने युवा मित्रों को पुस्तक भेंट करें! यदि आप बुजुर्ग हैं तो बच्चों को चॉकलेट के स्थान पर पुस्तक भेंट करें! यदि आप धर्म प्रेमी, दानी सज्जन हैं तो अपने निकट के किसी लेखक और कवि को प्रोत्साहित करके उसके पुस्तक प्रकाशन में सहायता जरूर करें! इनमें से कोई एक प्रयास करके तो देखिए कि कैसा लगता है आपको! आपका यह प्रयास हमारी संतानों को संस्कारवान् बनाएगा। हमारी संतानें ही समाज बनाएंगी। संतानें संस्कारवान् होंगी तो समाज भी संस्कारवान् होगा। समाज संस्कारवान् होगा तो देश भी संस्कारवान् होगा और संस्कारवान् देश ही विश्व गुरु कहलाया करते हैं। इसलिए हम कहना चाहते हैं-

अढ़ाई अक्षर किताब का पढ़े सो पंडित होय!
जो पढ़ न पाए किताब कभी, तो जग बैरी होय!
विद्यार्थी कहे पुकार के, क्यों मन बैरी होय!
कर जो दोस्ती किताब से, मन उसका पावन होय।

सबसे बड़ा दान

❑सहदेव समर्पित

'संसार का उपकार' इस शब्द-समूह पर विचार किया जाए तो यह एक बहुत बड़ी बात है। प्रथम तो यह कि यह कर्त्तव्य प्रत्येक मनुष्य का है-दूसरे उसके उपकार के दायरे में न तो केवल उसके परिवार के लोग आते हैं, न केवल गाँव शहर या देश के-और केवल मनुष्य ही नहीं प्रत्येक प्राणी की गणना इसके अन्दर हो जाती है। मुख्य उद्देश्य है- संसार का उपकार और सब गौण उद्देश्य है। ऋषि से जब पूछा गया कि आप मोक्ष के सर्वोत्तम सुख को, समाधि के आनन्द को छोड़कर क्या सुधार के पचड़े में पड़ गए तो उन्होंने उत्तर दिया कि मेरे लिए लोगों के दु:ख दूर करना-उन्हें अन्धकार से बचाना ही सबसे बड़ा आनन्द है।

यह उपदेश दिया तो मनुष्य मात्र को है-लेकिन मनुष्य को छोड़कर अन्य सभी किसी न किसी रूप में संसार का उपकार करते हैं। एक छोटी सी चींटी से लेकर हाथी तक पशु-पक्षी, कृमि, कीट पंतग-वृक्ष लता-आदि। लेकिन मनुष्य ही ऐसा प्राणी है जो इन सब से उपकार लेता तो है- उपकार करने में कंजूसी, कृपणता दिखाता है। बहुत से मनुष्य और उनके समाज अपने-अपने साधनों, विचार के अनुसार उपकार करते भी हैं- बड़े-बड़े चिकित्सालय, भोजनालय, लंगर, आंखों के कैम्प, प्याऊ, सदाव्रत आदि चलते हैं, सर्दियों में कम्बल वस्त्र आदि बांटे जाते हैं। ये सब उपकार के साधन हैं। लेकिन सब से बड़ा उपकार तो ज्ञान के आलोक से आलोकित करना है। कहते हैं कि आदम और हव्वा को नंगे होने का ज्ञान शैतान ने कराया था, जिसे न जाने किसने बनाया था और जो भगवान की नहीं मानता था। पता नहीं उसे शैतान क्यों कहा गया। जबकि ज्ञान का रास्ता बताने वाले को तो देवता कहना चाहिए। वास्तव में यह सत्य है कि ज्ञान प्रदान करने वाले देवता ही होते हैं। विद्या का दान सर्वोत्तम दान है-ताकि मनुष्य स्वयं अपने विवेक को जाग्रत कर सत्य-असत्य का निर्णय कर सके।

मत्तूरु गांव में वर्षों से बोली जा रही है 'संस्कृत'

❑डॉ. रमेश ठाकुर

एकाध दशकों से पश्चिमी भाषा इस कदर हावी हुई है कि हमने अपनी पारंपरिक भाषाओं और सभ्यताओं को पीछे छोड़ दिया है। इनमें 'संस्कृत भाषा' अव्वल स्थान पर है। कड़वी सच्चाई यह है कि समूचे भारत में मात्र एक प्रतिशत भी संस्कृत का प्रचार-प्रसार, बोलचाल और पठन-पाठन नहीं बचा? ऐसे में संस्कृत से जुड़ी एक सुखद खबर मन को सन्तोष देती है। खबर है कि देश में आज भी एक गांव ऐसा है जहां चौबीसों घंटे सिर्फ संस्कृत ही बोली और पढ़ी जाती है। 'मत्तूरु' गांव में संस्कृत जिंदा है। वहां के लोग दैनिक बातचीत में नियमित संस्कृत का प्रयोग करते हैं। संस्कृत भाषा की जो परंपरा सदियों पहले हुआ करती थी, उस गांव में अब भी यथावत् है। भारत के राज्यों में एकाध गांव और भी हैं जहां संस्कृत बोली जाती है, लेकिन इस गांव में शत-प्रतिशत संस्कृत का प्रयोग होता है।

'मत्तूरु' गांव कर्नाटक से करीब 300 किलोमीटर दूर 'तुंग नदी' के समीप बसा है जिसे देश के अंतिम 'संस्कृत भाषी' गांव की उपाधि हासिल है। गांव में रहने वाले प्रत्येक व्यक्ति को संस्कृत बोलनी, लिखनी और पढ़नी अच्छे से आती है। इस गांव में 16वीं शताब्दी से संस्कृत बोली जाती है। किसानों से लेकर नौकरीपेशा भी संस्कृत में बात करते हैं। इस अनोखे गांव का आकर्षण ऐसा है कि पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी से लेकर राजीव गांधी, इंदिरा गांधी और पूर्व राष्ट्रपति एपीजे अब्दुल कलाम भी भ्रमण कर चुके हैं। साल भर देश-विदेश के लोग गांव का विजिट करते हैं। ताज्जुब करने वाली बात ये है कि गांव में बाहरी लोगों के लिए कोई होटल या रेस्टोरेंट नहीं है। अतिथियों के लिये गांववासी अपने यहां खाना और रुकने की व्यवस्थाएं निशुल्क करते हैं। संस्कृत प्रेमी जब पहुंचते हैं तो गांव वाले उन्हें पानी और गुड़ देकर स्वागत करते हैं।

संस्कृत के अलावा वहाँ हिंदी या अंग्रेजी में गांव के लोग एक शब्द भी नहीं बोलते। निश्चिततः अंग्रेजी

और अन्य देशी-विदेशी भाषाओं ने संस्कृत को पीछे धकेला हो, लेकिन 'मत्तूरु' गांव आज भी संस्कृत की संस्कृति को सहेजे हुए है।

भारतीय अपनी देशी भाषाओं को छोड़कर बाहरी भाषाओं को अधिक व्यावहारिक और उपयोगी मानने लगे हैं। लेकिन 'मत्तूरु' गांव में विभिन्न देशों के लोग संस्कृत सीखने लगातार पहुंच रहे हैं।

'भाषा एवं संस्कृति मंत्रालय' का ताजा आंकड़ा बताता है कि भारत में पिछड़ती भाषाओं को विदेशी लोग बड़े चाव से सीख रहे हैं। विदेश के ज्यादातर विश्वविद्यालयों में हिंदी और संस्कृत प्रमुखता से पढ़ाई जाने लगी है जिनके प्रोफेसर या विशेषज्ञ कोई भारतीय नहीं, बल्कि विदेशी हैं, जो हमारे यहां से सीखकर गए हैं। यह अपने आप में बड़ा मुद्दा है कि जिन भाषाओं को हम नकार रहे हैं उन्हें विदेशी अपना रहे हैं? इसके पीछे का लॉजिक हमें समझना होगा? भविष्य में हमारे लिए खतरनाक भी साबित हो सकता है। क्योंकि भाषाओं के बल पर घुसपैठ होना अब कोई बड़ी बात नहीं?

संस्कृत को 'देवों की भाषा' कहा गया है। संस्कृत के गर्भ से ही संसार की ज्यादातर भाषाओं की उत्पत्ति हुई है। संस्कृत को भारत की सर्वाधिक पुरानी भाषाओं में गिना जाता है। इसलिए संस्कृत के संरक्षण और आधुनिक शिक्षा प्रणाली के साथ-साथ इसे भी उतना ही महत्व दिए जाने की जरूरत है। संस्कृत की संस्कृति बचाने की दिशा में 'मत्तूरु' गांव हमारे लिए उदाहरण है। (साभार हरिभूमि)

राष्ट्र का स्वरूप क्या है ?

❑स्व. पण्डित क्षितीश जी वेदालंकार
(पूर्व सम्पादक 'हिन्दुस्तान' एवं 'आर्यजगत्')

जब तक हम भारत के इस सही राष्ट्रीय स्वरूप को नहीं समझेंगे, तब तक राष्ट्र की रक्षा हमेशा सन्देहास्पद बनी रहेगी। भारत के भूखण्ड के प्रति भारतीय जनता का अनुराग पैदा हो और वह जन अपनी प्राचीन वैदिक संस्कृति से प्रेरणा लेकर संकल्प करने और कष्ट सहने के लिए प्राणवान् बने, तभी राष्ट्र की रक्षा हो सकती है।

भारत के प्राचीन तत्त्ववेत्ताओं ने मानव-जीवन का और सृष्टि का निरीक्षण और परिवीक्षण करने के पश्चात् एक अद्भुत सिद्धान्त का आविष्कार किया था। वह सिद्धान्त था- 'यत् पिण्डे तद् ब्रह्माण्डे।' अर्थात् जो पिण्ड या माइक्रोकोज्म (Microcosm) में है, वही ब्रह्माण्ड या मैक्रोकोज्म (Macrocosm) में है। इस सिद्धान्त के द्वारा व्यक्तिगत रूप से मानव को और समष्टिगत रूप से जगत् को समझने का मार्ग सरल हो जाता है।

मानव-जीवन तीन चीजों का समुच्चय है- शरीर, मन तथा आत्मा। शरीर बिना मन और आत्मा के टिकने का कोई आधार नहीं रहता और आत्मा के बिना केवल शरीर निरा मिट्टी है। इसलिए जब तक शरीर में जीवात्मा विद्यमान है, तब तक मनुष्य जीवित रहता है, जीवन के सारे कार्यकलाप करता है और जिस दिन जीवात्मा निकल जाता है या प्राण-पखेरू उड़ जाते हैं, उस दिन उस आत्माविहीन और प्राण-विहीन शरीर को स्वयं अपने सगे-सम्बन्धी ही, जो उस व्यक्ति के जीवित रहते उससे इतना अधिक स्नेह रखते थे, शव समझकर श्मशान में ले जाकर अग्नि को समर्पित कर देते हैं। जब तक शरीर और आत्मा का संयोग बना रहता है, तब तक सब कर्मेन्द्रियाँ और ज्ञानेंद्रियाँ भी सक्रिय रहती हैं। तभी तक मन का भी ताना-बाना रहता है। पर जिस दिन वह संयोग टूट जाता है, उस दिन सब कर्मेन्द्रियाँ और ज्ञानेन्द्रियाँ तथा मन व्यर्थ हो जाते हैं। मन भी शास्त्रकारों के मतानुसार 11वाँ इन्द्रिय ही है। उसको पाँचों कर्मेन्द्रियों और पाँचों ज्ञानेन्द्रियों में परिगणित नहीं किया जा सकता, इसलिए उसे अलग से 11वाँ इन्द्रिय कहा गया है। उसका कारण यह है कि मन- आत्मा और शरीर के बीच का सन्देशवाहक है। मन ही दोनों को जोड़ता है और मन के माध्यम से ही शरीर की आत्मा पर और आत्मा की शरीर पर प्रतिक्रिया होती है। अगर बीच में यह मन न हो तो केवल ज्ञानेन्द्रियाँ और कर्मेन्द्रियाँ जो शरीर का हिस्सा हैं, संवादहीनता की स्थिति में पहुँच जायेंगीं।

जिस प्रकार मानव-जीवन के लिए शरीर, मन और आत्मा होना आवश्यक है, उसी प्रकार प्रत्येक राष्ट्र का भी शरीर, मन और आत्मा होना आवश्यक है। तभी वह जीवंत राष्ट्र बनता है। राष्ट्र का शरीर क्या है? राष्ट्र का शरीर है वह भूमि-खण्ड जो उसे अन्य देशों से अलग करता है। ऐसे भौगोलिक परिवेश का नाम ही देश है। देश शब्द के अर्थ में यह बात छिपी हुई है कि वह किसी प्रदेश-विशेष या क्षेत्र-विशेष का द्योतक है। चारों दिशाओं में फैले इस भूमिखण्ड का निर्माण बहुत बार राजनीतिक घटनाचक्र के कारण मानव-निर्मित सीमाओं से घिरा होता है और बहुत बार वह ऐसी प्राकृतिक सीमाओं से घिरा होता है, जो उसकी स्वयं ही अन्य देशों से अलग पहचान करवाती हैं। जहाँ तक भारत का सम्बन्ध है, उसकी सीमाएँ प्रकृति-प्रदत्त हैं। इसलिए उसको 'देवभूमि' कहा गया है। दोनों शब्दों का एक ही अर्थ है। उत्तर में हिमालय, दक्षिण में हिन्दमहासागर, पूर्व में बंग सागर और पश्चिम में अरब सागर- ये मानव निर्मित नहीं हैं। ये चारों केवल प्रकृति के ही चमत्कार हैं, किसी मनुष्य के नहीं। मनुष्य न हिमालय बना सकता है, न हिन्द महासागर और न ही अरब सागर या बंग सागर। इसलिए वेद में कहा गया है-

यस्येमे हिमवन्तो महित्वा, यस्य समुद्रं रसया सहाहुः।
यस्येमाः प्रदिशो यस्य बाहू, कस्मै देवाय हविषा विधेम॥

–'बर्फ से ढ़की हुई चोटियों वाले पर्वत और जगत् में जीवन रस का संचार करने वाली नदियों के साथ समुद्र जिसकी महिमा गाते हैं और दिशा-प्रदिशाएँ जिसकी भुजाओं के समान हैं, उस सुख-स्वरूप परमात्मा को हम नमस्कार करते हैं।' मनुस्मृति में जो आर्यावर्त की परिभाषा की गई है, वह इन चारों प्रकृति की चमत्कार-स्वरूप सीमाओं से घिरा हुआ भू-खण्ड ही भारत देश है। यही राष्ट्र का शरीर है।

शरीर में जो स्थान मन का है, देश में वही स्थान जन का है। अगर केवल भूमि-खण्ड हो और उसमें रहने वाले कोई जन न हों तो वह देश राष्ट्र नहीं कहला सकता। उस देश के निवासी ही उस भूमि-खण्ड को (जो राष्ट्र का शरीर है), राष्ट्र की आत्मा के साथ जोड़ते हैं। जिस प्रकार शरीर और आत्मा के बीच के संवाद का काम मन करता है, उसी प्रकार राष्ट्र के शरीर और आत्मा के बीच संवाद का काम उस देश के निवासी करते हैं। यह जन ही राष्ट्र का मन है। महर्षि पाणिनि ने '**सोऽस्याभिजनः**' कहकर किसी भी प्रदेश के निवासी को 'अभिजन' शब्द की संज्ञा दी है। उसी को हम यहाँ जन कह रहे हैं।

अब राष्ट्र की आत्मा क्या है, इस पर विचार करें। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि भारतीय राष्ट्र की आत्मा वैदिक संस्कृति है। उसी को वैदिक धर्म या उसके मिलावटी रूप को हिन्दू धर्म और हिन्दू संस्कृति कहना चाहिए। वैसे हम 'हिन्दू' शब्द को धर्मवाचक होने के बजाय 'राष्ट्रवाचक' ही अधिक मानते हैं। परन्तु भाषा के शिथिल प्रयोग के कारण और कुछ इतिहास की अनभिज्ञता के कारण, तथा कुछ विदेशियों द्वारा वैसा प्रचार किये जाने के कारण आम जनता ने अपने व्यवहार में हिन्दू शब्द को धर्मवाचक मानकर इसका प्रयोग प्रारम्भ कर दिया है। हम जिसे वैदिक संस्कृति कह रहे हैं, वही इस भारत की आत्मा है, वह इसका प्राण है। जिस तरह आत्मा के बिना शरीर निष्प्राण हो जाता है, उसी प्रकार इस वैदिक संस्कृति के बिना भारत निष्प्राण है।

ऋषि दयानन्द ने बार-बार एक वाक्य-खण्ड का प्रयोग किया है 'ब्रह्मा से लेकर जैमिनि मुनि पर्यन्त'। ब्रह्मा से लेकर जैमिनि मुनि पर्यन्त की कालावधि कितनी है, इस पर बहस हो सकती है। परन्तु यह निश्चित है कि वह अवधि हजारों सालों से कम नहीं है। हमारे इतिहासकार, चाहे वे भारतीय मूल के हों, चाहे विदेशी मूल के, प्रायः भारतीय इतिहास का प्रारम्भ महात्मा बुद्ध के काल से करते हैं और उससे पहले के काल को प्रागैतिहासिक काल की कोटि में डाल देते हैं।

आश्चर्य है कि महात्मा बुद्ध के पश्चात् के अढ़ाई हजार वर्षों के इतिहास पर तो इतनी ऊहापोह होती है, पर उससे पहले के हजारों वर्ष के इतिहास को इतिहास-कोटि में ही नहीं गिना जाता। बहुत हुआ तो इतिहासकार महाभारत काल तक तो पहुँच जाते हैं, जो उनकी दृष्टि से तीन हजार साल परन्तु हमारी दृष्टि से पाँच हजार साल पहले की घटना है। कहाँ हजारों सालों का इतिहास और कहाँ यह अढ़ाई-तीन हजार साल का इतिहास। प्रश्न यह है कि महात्मा बुद्ध से पहले, सृष्टि के आदि से लेकर हजारों सालों तक, जिस विचारधारा और संस्कृति ने इस देश को जीवित रखा है, वह केवल वैदिक संस्कृति ही है या नहीं? जब अन्य धर्मों या धार्मिक विचारधाराओं का प्रादुर्भाव भी नहीं हुआ था, तब वैदिक धर्म ही सर्वत्र छाया हुआ था।

सच तो यह है कि वैदिक धर्म से भिन्न किसी अन्य मत को धर्म नाम से सम्बोधित करना ही बहुत बड़ी भूल है। जितने अन्य मत-मतान्तर हैं, वे व्यक्ति-विशेष पर निर्भर हैं। परन्तु वैदिक धर्म किसी व्यक्ति-विशेष पर नहीं, वह तो ऋषियों के द्वारा प्रकाशित परमात्मा द्वारा प्रदत्त ज्ञान का

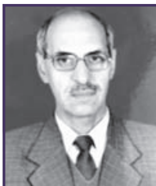

प्रेरक-वचन

सेवासिंह वर्मा, पूठ खुर्द, नई दिल्ली
(9958594981)

❖जब तक जिंदगी पटरी पर चल रही होती है हम सोचते हैं कि शायद हम ही चला रहे हैं, लेकिन जिन्दगी जब पटरी से उतरती है तो सच सामने आता है कि जिंदगी कोई और ही चला रहा है।

❖भाग्य पर पूर्णतः निर्भर न रहो, पुरूषार्थ करो।

❖जीवन की हर सुबह कुछ आशाएं लेकर आती है, और हर शाम कुछ अनुभव देकर जाती है।

❖डाली से टूटा फूल फिर से नहीं लग सकता है परंतु डाली मजबूत हो तो उस पर नया फूल खिल सकता है! इसी तरह जीवन में खोये पल को ला नहीं सकते अपितु हौंसले व विश्वास से आने वाले हर पल को खुबसूरत बना सकते हैं।

उन्मेष है। अन्य मत वर्ग-विशेष के लिए, स्थान विशेष के लिए या अपने कर्म-काण्ड के लिए, अपनी अलग पहचान स्थापित करते हैं, परन्तु वैदिक धर्म देश और काल से अनवच्छिन्न रहकर समस्त मानव मात्र के जीवन को सुचारू रूप से चलाने के लिए न केवल ज्ञान-विज्ञान का, प्रत्युत सम्पूर्ण नैतिकता का भी आधार प्रदान करता है। इसलिए हम कहते हैं कि मत-मतान्तर या मज़हब या रिलिजन अनेक हो सकते हैं, परन्तु धर्म मानव-मात्र का केवल एक ही हो सकता है।

वह धर्म कौन-सा हो सकता है, यह भी न केवल इतिहास के द्वारा बल्कि तर्क के द्वारा और अब तक प्राप्त की गई समस्त खोजों के द्वारा परिपुष्ट वैदिक धर्म ही है, अन्य कोई नहीं। यह वैदिक विचारधारा ही इस भारत राष्ट्र की मूल आत्मा है और बाकी अन्य जितने मत-मतान्तर हैं, वे उस पर पड़ी हुई छाया या गर्द-गुबार के समान हैं।

इस प्रकार भारत का भूमि-खण्ड, भारत का जन और भारत की आत्मा अर्थात् उसकी संस्कृति-ये तीनों मिलकर भारत राष्ट्र का निर्माण करते हैं। अगर इनमें से एक भी कड़ी टूट जाये तो केवल राष्ट्र की रक्षा ही नहीं, बल्कि उसका अस्तित्व भी कठिन है। हमारे देश का दुर्भाग्य यह है कि न तो हमने भारत के समस्त भूमि खण्ड की सही रूप से पहचान की है, न ही भारत के जन ने अपने नागरिक कर्तव्यों को समझा है और न ही राष्ट्र की प्राण-स्वरूप अपनी प्राचीन वैदिक संस्कृति को ही हृदयंगम किया है।

हमने ऊपर भारत की सीमाओं को देव-निर्मित अर्थात् प्रकृति-प्रदत्त कहा है। परन्तु व्यवहार में हमने वाघा और अटारी को अपने देश की सीमा मान रखा है। वाघा और अटारी मनुष्यकृत सीमाएं हैं, प्रकृति प्रदत्त नहीं। इसलिए भारत की राष्ट्रीयता में खण्डित भारत का नहीं, अखंड भारत का ही स्थान है। अखंड भारत ही राष्ट्रीय इतिहास की विरासत है।

जहाँ तक जन का सम्बन्ध है, किसी राष्ट्र की रक्षा के लिए जब तक उसके नागरिक दीक्षा और तप नहीं करते, तब तक वह राष्ट्र सुरक्षित नहीं रह सकता। दीक्षा अर्थात् राष्ट्र की रक्षा का संकल्प, और तप अर्थात् राष्ट्र की रक्षा के लिए सब तरह के कष्ट सहने की तत्परता।

जब तक हम भारत के इस सही राष्ट्रीय स्वरूप को नहीं समझेंगे, तब तक राष्ट्र की रक्षा हमेशा सन्देहास्पद बनी रहेगी। भारत के भूखण्ड के प्रति भारतीय जनता का अनुराग पैदा हो और वह जन अपनी प्राचीन वैदिक संस्कृति से प्रेरणा लेकर संकल्प करने और कष्ट सहने के लिए प्राणवान् बने, तभी राष्ट्र की रक्षा हो सकती है।

[7 दिसम्बर, 1986, आर्यजगत् साप्ताहिक का सम्पादकीय]
(पं. क्षितीश वेदालंकार ग्रन्थावली खण्ड 6 से उद्धृत)

पं. क्षितीश वेदालंकार ग्रन्थावली के
सम्पादक मण्डल के सदस्य
प्रसिद्ध लेखक **डॉ. विवेक आर्य की सम्मति**

कीर्तिशेष पण्डित क्षितीश जी वेदालंकार आर्यजगत् के सिद्धहस्त लेखक, वक्ता और सम्पादक थे। 'हिन्दुस्तान' और 'आर्यजगत्' के अपने सम्पादन कार्यकाल में पण्डित जी ने निर्भीक, गवेषणापूर्ण, राष्ट्रवादी पत्रकारिता के नवीन कीर्तिमान स्थापित किये। उनके जीवनकाल में उनकी अनेक पुस्तकें प्रकाशित हुईं, जो राष्ट्रीय स्तर पर चर्चित हुईं। अब उनके सम्पूर्ण साहित्य का पुनर्प्रकाशन हुआ है। मैं आर्यजगत् के गम्भीर पाठकों, गवेषकों, लेखकों से निवेदन करता हूँ कि वे इस श्रावणी पर क्षितीश जी के सम्पूर्ण साहित्य को मंगाकर अवश्य पढें। यह साहित्य आज की पीढ़ी को एक नई दिशा देगा, ऐसा मुझे पूर्ण विश्वास है।

(विवरण इस अंक के अन्तिम पृष्ठ पर देखें)

प्रेरणा पथ

❑आर्यवीर कर्मवीर

●जिसका अन्त:करण गंभीर होता है, वे छोटे होकर भी बड़े बड़े काम कर निकालते हैं। जैसे आंख की पुतली का तिल कितना छोटा होता है तो भी वह आकाश को अपने अन्दर दिखा देता है।

●जो व्यायाम के लिए समय नहीं निकालते, उनको बिमारी एवं अस्पताल के लिए समय अवश्य निकालना पड़ेगा।

●संयम और आत्मानुशासन का सूत्र यह है कि इन्द्रियाँ तो मन के पीछे चलती रहें, मन बुद्धि के पीछे चले, बुद्धि आत्मा के पीछे चले और स्वयं आत्मा परमात्मा की प्रेरणा के पीछे चलता रहे।

-आर्यसमाज, गंगायचा अहीर, बीकानेर, रेवाड़ी

योगेश्वर श्रीकृष्ण की प्रासंगिकता

❑गौरीशंकर वैश्य विनम्र,
117 आदिलनगर, विकासनगर, लखनऊ- 226022 (09956087585)

श्रीकृष्ण नीति के मर्मज्ञ हैं, तो कर्म के प्रवर्तक हैं। वे धर्म के प्रतिपादक हैं तथा अधर्म के विध्वंसक हैं। वे राष्ट्रनीति के पथ प्रदर्शक हैं। वे राष्ट्रनीति के प्रयोगधर्मी दिग्दर्शक हैं। वे समाज धर्म के संरक्षक हैं। वे सज्जनों की रक्षा और दुष्टों के विनाश के लिए तत्पर रहते हैं।

भारत राष्ट्र के जनमानस को आज पुन: सदाचार-शिक्षण की आवश्यकता है, जिससे राष्ट्र का चारित्रिक स्तर ऊँचा उठे। उसे सदाचार की शिक्षा सत्पुरुषों के चरित्र चित्रण से ही संभव है। ऐसे श्रेष्ठ पुरुषों में योगिराज श्रीकृष्ण का स्थान अग्रगण्य है।

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत- संभवामि युगे युगे का उद्घोष करने वाले योगेश्वर श्रीकृष्ण ने असुरत्व के विनाश और देवत्व के संरक्षण के लिए धरती पर जन्म लिया और धर्म के विकृत रूप को सही दिशा देने के लिए समग्र क्रांति का बिगुल बजाया।

श्रीकृष्ण देश के समस्त क्षेत्रों के शासकों के राजनीतिक और सामरिक कौशल एवं क्षमता का एकत्रीकरण करते हुए दिखाई देते हैं। वे विश्व के बृहत्तम महायुद्ध के संचालक, सूत्रधार और नायक बनकर धर्म की स्थापना करते हैं। धर्म की ग्लानि होने पर साधुओं के परित्राण के लिए दुष्टों के विनाश के लिए युगानुकूल निर्णय लेते हैं। श्रीकृष्ण के आभामण्डल के प्रति सामान्य जन के मन में कुतूहल, आकर्षण, अनुरक्ति, श्रद्धा और विश्वास एक साथ प्रकट होते हैं। भगवान श्रीकृष्ण का समूचा जीवन धार्मिक, नैतिक, सामाजिक तथा राजनीतिक परिवर्तन की दृष्टि से एक युगान्तकारी आन्दोलन माना जा सकता है। राष्ट्र के लिए ही नहीं, अपितु सम्पूर्ण विश्व के लिए आज योगेश्वर श्रीकृष्ण की प्रासंगिकता अपरिहार्य है।

जन्माष्टमी का आनन्दोत्सव

भाद्रपद मास के कृष्ण पक्ष की अष्टमी को श्रीकृष्ण जन्माष्टमी का आनन्दोत्सव मनाया जाता है। 'कृष्ण' का शाब्दिक अर्थ है- जो आकर्षित करे अर्थात् सेंटर ऑफ ग्रेविटेशन। कृष्ण जैसी चेतनाओं को 'सकारात्मक ब्लैक होल' कह सकते हैं। उनके अंदर जो जाता है, वह अहंकार मुक्त हो जाता है और उसका आत्मिक विकास होने लगता है। जन्माष्टमी का उद्देश्य है कि श्रीकृष्ण के असाधारण व्यक्तित्व की जीवन-चर्या से हम कुछ सीखें और उसे अपनाएं।

योगेश्वर श्रीकृष्ण

श्रीकृष्ण वास्तव में लोक चेतना के स्वर हैं। वे ज्ञानयोग के मर्मज्ञ हैं, कर्मयोग के प्रतिपादक हैं और भक्तियोग के समन्वयक हैं। वे राजयोग के प्रवक्ता हैं, युद्धनीति में विशारद हैं, कूटनीति के प्रयोक्ता हैं और दूतनीति के संवाहक हैं। वे शक्तिसंपन्न होने पर भी निरभिमानी हैं। वे शत्रुओं के संहार में निपुण हैं। वे लोकप्रिय वंशी-वादक हैं, वे माखन-दधिप्रिय हैं, तो चक्र सुदर्शनधारी भी हैं।

आज अत्यंत प्रासंगिक हैं श्रीकृष्ण

आज के समय में कृष्ण की प्रासंगिकता निर्विवाद है। आज जितनी हिंसा और बर्बरता समाज में बढ़ रही है, उसका एक ही निदान है-कृष्ण नीति। व्यक्ति करुणा और संवेदनशीलता से भर जाये, स्त्री को दैवी सम्मान प्राप्त हो। कृष्ण के संयम और सदाचार का अनुकरण किया जाता तो शायद दुनिया से कामुकता विदा हो गई होती।

श्रीकृष्ण महाभारत युद्ध के महानायक होते हुए भी स्वयं युद्ध नहीं करते, अपितु धर्म योद्धा अर्जुन के सारथी बनकर उनका दिग्दर्शन करते हैं। गीता के अन्तिम श्लोक में कहा गया है-

यत्र योगेश्वरः कृष्णः यत्र पार्थो धनुर्धरः।
तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम।।

अर्थात जहाँ योगेश्वर कृष्ण हैं और जहाँ धनुर्धर अर्जुन हैं, वहीं ऐश्वर्य, विजय, अलौकिक शक्ति तथा नीति भी निश्चित रूप से रहती है।

परिस्थितियों का प्रबंधन

श्रीकृष्ण का जीवन आज के समाज के लिए सीखने को बहुत कुछ दिशा प्रदान करता है। अनेक बार अनेक माध्यमों से अपने पाल्य-स्थान में प्राणघातक वध-प्रयत्नों से बचते हुए श्रीकृष्ण 'पूत के पाँव पालने में ही दिखाई दे जाते हैं' का प्रदर्शन करते हुए आनन्द-मग्न दिखायी देते हैं। अपने मामा कंस के अत्याचारों के कारण वे किशोरावस्था में ही उसे यमलोक पहुँचा देते हैं। वे भीष्म पितामह के युद्ध में अजेय होने और दुर्जेय गुरु द्रोणाचार्य के अंत का मार्ग खोज लेते हैं। राज-सत्ता का आमंत्रण ठुकरा कर विदुर की कुटिया में स्वादपूर्वक साग खाते हैं। वे भरी सभा में अपमानित द्रोपदी की लाज बचाते हैं। वे कुशलतापूर्वक 'आपदा प्रबंधन' का सूत्रपात करते हैं।

निपुण रणनीतिकार

क्रूर एवं अत्याचारी कंस का वध करने अथवा आततायी एवं दुराचारी जरासंध का उन्मूलन करने में श्रीकृष्ण सम्पूर्ण चतुराई की प्रतिमूर्ति हैं। अधर्मी दुर्योधन एवं उसके कपटी सहयोगियों से पाँच राज्य-वंचित पांडव राजकुमारों को उनका विधिक राज्य वापस दिलाने के लिए वे युद्ध से पूर्व सभी प्रकार के संधि-प्रयत्न करते हैं, परन्तु कोई मार्ग शेष न रहने पर 'महाभीषण संग्राम' का शंखनाद करते हैं।

सभी आयुवर्ग के लिए आदर्श

श्रीकृष्ण के जीवन को देखना अत्यंत आकर्षक है। वे सभी पृष्ठभूमियों और आयुवर्ग के लोगों से जुड़ सकते हैं। वे बच्चों और युवाओं के सदैव प्रिय और अनुकरणीय रहे। साधारण, विद्वान्, चतुर लोग उनके सिद्धान्तों से सीख ले सकते हैं। यही नहीं, दुष्ट भी उनसे जुड़ सकते हैं। राजनीतिज्ञ, गृहस्थ और साधु उनके साथ आत्मीय संबंध अनुभव करते हैं। वे द्वारकाधीश और योगेश्वर दोनों हैं। कृष्ण हर उस व्यक्ति के लिए आदर्श प्रतीक हैं, जो अपनी क्षमता विकसित करना चाहता है।

अपनत्व से परिपूर्ण

यदि आज देश-विदेश की युवा पीढ़ी श्रीकृष्ण के प्रति आकर्षित हो रही है, तो इसका स्पष्ट कारण है- सम्पूर्ण चरित्र में श्रीकृष्ण का स्वाभाविक, मानवीय और अपनत्व से परिपूर्ण होना। वे देवत्व से संपृक्त होकर भी मनुष्यत्व का प्रतिरूप दिखाते हैं। वे बाल सखा सुदामा के लिए सर्वस्व लुटा देते हैं। वे आश्रित के संरक्षक हैं। वे अनासक्त भाव से कर्म करते रहते हैं।

कर्मों की गहनता समझें

गीता में श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि प्रत्येक कर्म का फल होता है। हर कारण का प्रभाव होता है, किन्तु परिणाम पर आपका कोई नियंत्रण नहीं है। हमें अपने कर्म की गहनता समझने और तदनुसार यत्न करने की आवश्यकता है। केवल कर्म पर ही हमारा जोर है। किस कर्म का क्या प्रतिफल होगा, यह अत्यंत गूढ़ है।

चुनौतीपूर्ण समय में भी शांत एवं संयमित रहें

युद्धभूमि में जब अर्जुन अपने सगे-संबंधियों को देखकर विषाद में चले जाते हैं, तब श्रीकृष्ण उन्हें समत्व में रहकर युद्ध लड़ने की शिक्षा देते हैं। जब हर ओर अशांति हो, जब सब चीजें छिन्न- भिन्न होने लगें, उलट-पुलट हो जाएं, ऐसे कठिन और चुनौतीपूर्ण समय में भी मन का संयम एवं शांति बनाए रखें। जब जीवन की परिस्थितियां विषम हों, तभी आपके भीतर कुशलता चाहिए। जब लोग आपकी निंदा करें, उपहास करें और आपको अपना समर्थन न दें, उस समय आपको अंतर्दृष्टि की सर्वाधिक आवश्यकता होती है। उस समय 'योग'हमें संयम प्रदान करता है।

प्रतिक्रियाओं को करें कम

यदि आप क्रोध के आवेश में किसी व्यक्ति को लाठी मार दें तो अवश्य ही आपको क्रिया की प्रतिक्रिया भुगतनी पड़ेगी। परन्तु यदि यही कृत्य भीड़ को नियंत्रित करने के लिए पुलिसकर्मी द्वारा किया जाए, तो उस पर कोई उँगली नहीं उठा सकेगा। यदि उसने अपना कर्तव्य न निभाया होता, तो उसे समस्या का सामना करना पड़ता। अनासक्त भाव से किए कर्म में न किसी के प्रति क्रोध होता है और न ही घृणा। 'कर्म' वह है , जिसके करने पर आपका उत्थान होता है और आपको निरन्तर शांति प्राप्त होती है। वह मनुष्य जो कर्म में अकर्म को देख पाता है, वही सर्वाधिक बुद्धिमान है। इसके लिए श्रीकृष्ण ने एक तकनीक बतायी है – कर्म के संपादन के समय अपने 'अकर्म' को पहचानना।

गोपालन का संदेश

श्रीकृष्ण ने बाल्यावस्था में ग्वाल-बालों के संग धेनुएँ चरायी थीं। उन्होंने गोपालन किया, इसलिए उनका एक नाम गोपाल भी है। कृषि के साथ पशुपालन ग्रामीणों की अर्थ व्यवस्था का प्रमुख अंग है। बच्चों एवं घर के अन्य सदस्यों को स्वस्थ रहने के लिए दूध, दही और घी का सेवन

आवश्यक है। बाल गोपाल का यही संदेश है कि प्रत्येक घर में एक-दो गायों को अवश्य पालना चाहिए। आज गोवंश की दुर्दशा किसी से छिपी नहीं है, उन्हें कोई पालना नहीं चाहता और वे बेचारे भूखे-प्यासे आवारा भटकने के लिए विवश हैं। हम गाय को गोमाता कहते हैं, फिर भी उनकी अवहेलना कर रहे हैं। परिणाम यह है कि बच्चे गिलास भर दूध के लिए तरस रहे हैं। हमें पुन: गो-संस्कृति अपनाने पर विचार करना चाहिए।

समाज धर्म के संरक्षक

श्रीकृष्ण नीति के मर्मज्ञ हैं, तो कर्म के प्रवर्तक हैं। वे धर्म के प्रतिपादक हैं तथा अधर्म के विध्वंसक हैं। वे राष्ट्रनीति के पथ प्रदर्शक हैं। वे राष्ट्रनीति के प्रयोगधर्मी दिग्दर्शक हैं। वे समाज धर्म के संरक्षक हैं। वे सज्जनों की रक्षा और दुष्टों के विनाश के लिए तत्पर रहते हैं। वे करुणा और प्रेम से भरे होते हुए भी युद्ध में लड़ने की सामर्थ्य रखते हैं।

अस्तु, हर युग में श्रीकृष्ण की प्रत्येक क्रिया शिक्षाप्रद है, समझने योग्य है और अपनाने योग्य है। श्रीकृष्ण ने ही उस समय मनुष्य को कर्मयोगी बनाया। भविष्य के संदर्भ में कृष्ण का बहुत मूल्य है और हमारा वर्तमान नित्य उस भविष्य के निकट पहुँच रहा है, जहाँ कृष्ण की प्रतिभा निखरती जाएगी। जन्माष्टमी उन्हीं को याद करने, पूजने और उनके आचरणों को जीवन में उतारने का दिन है।

आर्य समाज की विजय : स्व. पं. चन्द्रभानु आर्य के संस्मरण

●शांतिधर्मी के संस्थापक आर्य भजनोपदेशक स्व. पण्डित चन्द्रभानु आर्य जी ने प्रसिद्ध लेखक व गवेषक आ. डॉ. विवेक आर्य जी को एक संस्मरण बताया था जिसका वे अपने व्याख्यानों में प्राय: उल्लेख करते हैं। पं. जी ने बताया कि जब हम पचास वर्ष पहले ग्राम में परिवारों में जाते थे तो परिवार बड़ा प्रसन्न होता था कि आज तो आर्य आये हैं। प्रचार के स्थान पर दिन रहते माता, बहनें अपने खटोलों, पीढों की बुकिंग कर जाती थीं कि कहीं बाद में स्थान न मिले। उस परिवार की बहनें, माताएँ, बहुएँ बड़ी श्रद्धा से उपदेशकों के लिये भोजन बनातीं। परिवार में सुख, शांति, मेल, समृद्धि होती थी। समय के साथ नई बहुएँ वहाँ विवाहित होकर आईं जो उपदेशकों को देखकर नाक चढ़ाने लगीं। हमने भी उन के रवैये और पुरुषों की दयनीय दशा, विवशता को देखकर उन घरों से किनारा कर लिया। पन्द्रह बीस वर्ष बाद जब कभी उस गांव में जाना हुआ तो उन घरों के बुजुर्ग हमें रोते मिले- महाशय जी, सत्य उपदेश के अभाव में घर का नाश हो गया। बच्चे शराबी, जुआरी हो गये।

●एक अन्य संस्मरण में पण्डित चन्द्रभानु आर्य जी ने डॉ. विवेक आर्य को बताया कि एक गांव में हम तीन-चार वर्ष के बाद प्रचार करने गये तो एक व्यक्ति, उनकी धर्मपत्नी और दो बच्चे हमारे पैरों में गिर गये। हमारे कई बार कहने पर वे उठे और हाथ जोड़कर खड़े हो गये। हमने बार-बार उनके भावुक होने का कारण पूछा तो वे द्रवित होकर बोले- पण्डित जी, आपकी वजह से हमारा घर बस गया। आप पिछली बार आये थे तो आपने घर को स्वर्ग बनाने की कथा सुनाई थी। उस समय हमारे घर में बहुत कलह होता था। कई बार तो आत्महत्या तक का कुविचार मेरे मन में आ जाता था। मेरे पति शराब पीते थे और मार-पीट करते थे। मैं उलटी बोलने से नहीं हटती थी। हमने आपको अपनी व्यथा सुनाई तो आपने मुझे बड़े स्नेह से कहा- बेटी, अगर तुम घर को बसाना चाहती हो तो उलटी बोलना छोड़ दो। आपकी बात का मेरे ऊपर बहुत प्रभाव हुआ और उस दिन से मैंने उलटा बोलना छोड़ दिया। सप्ताह भर तो मुझे कुछ असुविधा हुई, लेकिन मैंने अनुभव किया कि घर के वातावरण में बदलाव हो रहा था। इन्होंने शराब पीना छोड़ा तो नहीं था, पर कम कर दिया था। एक दिन जब ये पिये नहीं थे तो मैंने बहुत नम्रता से इन्हें बच्चों का हवाला देकर शराब छोड़ने को कहा तो इन्होंने उसी दिन मेरे सिर पर हाथ रखकर प्रण कर लिया कि अब शराब नहीं पिऊंगा। सचमुच इन्होंने उस दिन के बाद शराब छोड़ दी। हमारा घर बस गया। पण्डित जी ने बताया कि वह दम्पती बहुत आग्रह कर हमें अपने घर पर भोजन के लिये ले गया। बहुत सम्मान किया और कुछ दक्षिणा भी भेंट की। (पण्डित जी ने उनका नाम पता भी बताया था, वह हम जान बूझकर नहीं लिख रहे हैं, क्योंकि हमें भी नहीं पता कि वे सज्जन अब कहाँ हैं और किस स्थिति में हैं।)

प्रस्तुतकर्त्ता : सहदेव समर्पित

रामकथा में प्रक्षेप
विशेष सन्दर्भ : अग्निपरीक्षा

❑डॉ. ज्वलंतकुमार शास्त्री, चलभाष 7303474301

भारतीय आर्य प्राचीन काल से ही काव्य (कविता) के उत्साही प्रेमी थे। 1784 ई. में एशियाटिक सोसाइटी की स्थापना करने वाले सर विलियम जोन्स कहते हैं कि 'काव्य कला दैवी (Divine Art) है। कविता पहले स्वर्ग में रची जाती थी, फिर उसे वाल्मीकि ने धरती पर उतार दिया।' निखिल विश्व में निम्नलिखित 3 तीन ग्रन्थ सर्वातिशायी हैं- (1) वेद (2) रामायण (3) महाभारत। इन तीनों ग्रन्थों का प्रभाव न केवल भारतवर्ष में अपितु सम्पूर्ण संसार के साहित्य में सर्वाधिक देखा जाता है। वेदों के शब्द (पद) संसार की सभी भाषाओं में तत्सम या तद्भव रूप में पाए जाते हैं। रामायण और महाभारत में जिन स्थानों (भौगोलिक क्षेत्रों) का नाम और उल्लेख किया गया है वे आज भी हमारे बीच मौजूद हैं। *(देखिये शांतिधर्मी जुलाई 2025 अंक, स्व. पं. क्षितीश वेदालंकार जी का लेख-सम्पादक)* रामायण और महाभारत के पात्रों के नाम आज से हजारों वर्ष पूर्व रखे गए थे और वे नाम राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न, सुग्रीव, हनुमान, दशरथ, सीता, कौशल्या, सुमित्रा, अनुसूया, तारा आदि आज भी सहस्राब्दियों से रखे जा रहे हैं। इसी प्रकार रामायण में जिनका गर्हित चरित्र रहा- उन रावण, कुंभकर्ण, कैकेयी, मंथरा और शूर्पणखा के नाम आज भी भारतीय समाज में नहीं रखे जाते। वाशिंगटन स्थित 'मिडिल ईस्ट मीडिया रिसर्च इंस्टीट्यूट' के निदेशक श्री तुफैल अहमद भारतीयों की अस्मिता और पहचान रामायण के आदर्शों और संदेशों में देखते हैं। रामायण की कथा से बालक, वृद्ध, स्त्री, पुरुष सभी को केवल शिक्षा ही नहीं मिलती है अपितु शिक्षा के साथ-साथ आनन्द भी मिलता है। विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर के शब्दों में- 'यदि कवि वाल्मीकि मनुष्य के चरित्र का वर्णन न कर देव-चरित्र का वर्णन करते तो अवश्य ही रामायण का गौरव कम हो जाता...। राम के मनुष्य होने से ही रामचरित की इतनी महिमा है। रामायण में देवता ने पदच्युत होकर अपने को मनुष्य नहीं बनाया, मनुष्य ही अपने गुणों के कारण देवता बन गया है।'

शताब्दियों/सहस्राब्दियों से महर्षि बाल्मीकि की यह भविष्यवाणी चरितार्थ हो रही है-

यावस्थास्यन्ति गिरयः सरितश्च महीतले।
तावद्रामायणकथा लोकेषु प्रचरिष्यति। (बा.का. 2/36)

प्रक्षेपानुसन्धान

संस्कृत भाषा में निबद्ध अधिकांश प्राचीन साहित्य में प्रक्षेप हुए हैं। वैदिक संहिताओं को छोड़कर रामायण, महाभारत तथा मनुस्मृति जैसे प्रख्यात ग्रन्थ (जो सहस्राब्दियों से विद्वज्जनों से लेकर सामान्यजनों तक के कण्ठहार बने हुए हैं) भी इससे बच नहीं सके। वेद-मन्त्रों के अष्ट विकृतपाठों के कारण ही विशेषतया क्रमपाठ तथा घनपाठ की जटिलता ने वैदिक संहिताओं के पाठों को विकृत होने तथा प्रक्षेप की सम्भावनाओं को असम्भव बना दिया है। इसके अतिरिक्त वैदिक वाङ्मय में अनुक्रमणीकारों ने बहुपरिश्रमसाध्य ऋषि, देवता, छन्द, वर्ण, मात्रा तथा स्वरों तक की गणना कर रखी है, जिसके कारण मन्त्र संहिताओं में प्रक्षेप करने का कोई साहस नहीं कर सका। कतिपय ब्राह्मणग्रन्थों के स्वरांकित होने पर भी पशुमांसलोलुप कर्मकाण्डियों ने परवर्ती ब्राह्मणग्रन्थ और कल्पसूत्र साहित्य में भी प्रक्षेप करने में कोई कोर-कसर उठा नहीं रखी। पुनरपि पूर्वापर क्रम का ध्यान रखने पर यह प्रक्षेप-स्थल स्पष्ट हो जाता है। किन्तु, लौकिक संस्कृत साहित्य के आदिकाव्य 'रामायण' से लेकर भक्तिकालीन 'रामचरितमानस' प्रभृति ग्रन्थों में प्रक्षेपों की अधिकता देखने को मिलती है।

रामचरितमानस का पूरा 'लवकुशकाण्ड' प्रक्षिप्त है। इसी प्रकार वाल्मीकीय रामायण का सम्पूर्ण उत्तरकाण्ड प्रक्षिप्त है, क्योंकि कोई भी ग्रन्थ 'फलश्रुति' तक ही पर्यवसित माना जाता है। 'रामायण' में यह फलश्रुति युद्धकाण्ड के 128वें सर्ग के 107वें श्लोक से प्रारम्भ होकर 125वें श्लोक तक है।

इसके अतिरिक्त भी उत्तरकाण्ड के प्रक्षिप्त होने में अन्य भी प्रबल हेतु हैं। उत्तरकाण्ड के द्वितीय सर्ग से लेकर

34वें सर्ग तक रावण तथा राक्षसों का ही वर्णन है, जिसका रामकथा से कोई सम्बन्ध ही नहीं है। उत्तरकाण्ड की रचना-शैली काव्य-शैली न होकर पुराण-शैली है। वाल्मीकि स्थान-स्थान पर प्रकृति, पर्वत, वन, ऋतुओं और पशु-पक्षियों का वर्णन भी करते हैं जो उत्तरकाण्ड में अंशमात्र भी नहीं है। वाल्मीकि की उपमाएँ आनन्दप्रद और प्रासंगिक हैं, जिनका उत्तरकाण्ड में सर्वथा अभाव है। रामायण में आगत पात्रों के जन्मादिप्रभृति अन्तर्कथाओं का विस्तार विभिन्न पुराणों में पाया जाता है, जिसे रामायण के कथावाचकों ने पुराणों से लेकर यहाँ जोड़ दिया है। इन अन्तर्कथाओं की पूरी विवेचना रामकथा के उद्भव और विकास की पूरी यात्रा के गवेषक और शोधप्रज्ञ सम्मान्य फादर कामिल बुलके ने की है। सुधी पाठक को इस विषय की विस्तृत जानकारी बुलके के प्रख्यात शोधग्रन्थ 'रामकथा : उत्पत्ति और विकास' (प्रकाशक-हिन्दी परिषद, हिन्दी विभाग, प्रयाग विश्वविद्यालय, 1950 ई., षष्ठ संशोधित संस्करण 1999 ई.) से मिल सकती है।

वाल्मीकीय रामायण के शोधकर्ताओं का निष्कर्ष है कि बालकाण्ड का अधिकांश तथा सम्पूर्ण उत्तरकाण्ड नि:संदेह प्रक्षिप्त है। इसके अतिरिक्त मध्यवर्ती काण्डों में भी अनेक स्थलों पर परवर्ती कथावाचकों ने प्रक्षिप्तांश समाविष्ट कर दिये हैं। कतिपय विद्वान् यथार्थ स्थिति को जानते हुए भी पौराणिक मान्यताओं से निज की अत्यन्त आसक्तिवश इस पर लिखने तथा बोलने से बचते हैं। शम्भूक-प्रसंग, ययाति-शुक्राचार्य, लवणासुर तथा ब्राह्मण बालक की मृत्यु को शूद्र की तपस्या से जोड़ देने जैसी अधिकांश सामग्री का रामायण से कोई सम्बन्ध ही नहीं है। सीता का निर्वासन भी बाद में जोड़ा गया अंश है। प्रक्षिप्तांशों की पहचान के लिए शोधपरक दृष्टि का होना आवश्यक है। इसकी अनेक कसौटियाँ हैं यथा- मूल कथावस्तु से सीधा सम्बन्ध न होना, चमत्कारों का प्रदर्शन, अयुक्तिसङ्गक कथन तथा अमानवीय प्रवृत्तियों की भरमार इत्यादि। प्रक्षेपों की परम्परा का मुख्य आधार राम का ईश्वरीय परब्रह्म के रूप में उपपादन, अवतार वाद, अवान्तर कथाएँ, भिन्न प्रसंग, अतिशयोक्ति तथा पुनरुक्तियाँ हैं, जबकि रामायण का मूल स्वर नरत्व है, देवत्व नहीं। वाल्मीकि अनेक मानवीय गुणों से युक्त किसी पुरुष के बारे में जानना चाहते हैं- **ज्ञातुमेवम्विधं नरम्।** नारद उनको ऐसे ही पुरुष के बारे में बतलाते हैं- **तैर्युक्तः श्रूयतां नरः।** (बालकाण्ड 1/7)। इसी तरह सीता नारियों में श्रेष्ठ है- **नारीणामुत्तमा वधूः** (1/27)। रावण की मृत्यु और सीता की मुक्ति के बाद राम इसी नरत्व या मानवीय पक्ष पर जोर देते हैं- **दैवसम्पादितो दोषो मानुषेण मया जितः।** (युद्धकाण्ड 115/5)। अर्थात् रावण सीता को हर ले गया, वह दोष देव सम्पादित था, मुझ मनुष्य ने उसे मिटा दिया।

रामायण के मूल स्वर या मूल पाठ की ओर विद्वान् मनीषियों का ध्यान पूर्व में भी जाता रहा है। इस दृष्टि को ध्यान में रखकर अनेक विद्वज्जनों ने अपने ग्रन्थ लिखे हैं और इस पर विचार किया है। महामहोपाध्याय स्वामी भगवदाचार्य ने वाल्मीकि रामायण पर अपनी शोधपूर्ण स्थापनाएँ प्रकाशित की हैं। उनका मानना है कि सीता की अग्निपरीक्षा के समय जो दुर्वाक्य राम के मुख से कहलवाये गये हैं वे वाल्मीकि के चरित्रादर्श से मेल नहीं खाते। किसी स्त्री-निन्दक ने राम और सीता के चरित्र को मलिन-पंकिल करने के उद्देश्य से रामायण के मूल पाठ के साथ यह कुत्सित प्रसंग जोड़ दिया है। अग्निपरीक्षा का राम-सीता-सन्दर्भ वाल्मीकि के **चारित्र्येण च को युक्तः** तत्व-दर्शन के साथ न्याय नहीं करता। यहाँ वाल्मीकि अपने लक्ष्य से च्युत प्रतीत होते हैं। **'जितक्रोधो द्युतिमान् कोऽनसूयकः'** अर्थात् 'क्रोधजयी, उज्ज्वलमना एवं अनिन्दक' राम की खोज में वे तपोरत थे, वह राम अपनी सती-साध्वी पत्नी को ऐसी अभद्रता से दुत्कारे, भगवदाचार्य जी इसे वाल्मीकि की वाणी नहीं मानते। अत: उन्होंने अपनी संशोधित वाल्मीकीय रामायण में से अग्निपरीक्षा का प्रसंग ही निकाल दिया है।

तुलसीदास जी ने भी रामचरितमानस में मायावी सीता का ही अग्निपरीक्षण करवाया है, असली सीता तो पहले ही अग्नि में गुप्तवास के लिए चली गई थी। 'मानस' के 'अरण्यकाण्ड' में तुलसी के राम सीता से कहते हैं-

सुनहु प्रिया व्रत रुचिर सुसीला,
मैं कछु करबि ललित नर लीला।
तुम्ह पावक महं करहु निवासा,
जौं लगि करैं निसाचर नासा।

अध्यात्म रामायण में भी सीता की छाया-मूर्ति ने ही अग्नि में प्रवेश किया था। तमिल के महाकवि कम्बन ने भी अपने रामायण महाकाव्य में सीता की अग्निपरीक्षा के प्रसंग को वाल्मीकि के दोष-परिहार के ही रूप में व्यक्त किया है। सीता के सतीत्व पर लाञ्छन से वे विचलित हो उठते हैं।

सीता की 'अग्निपरीक्षा' का वर्णन युद्धकाण्ड के सर्ग 114 से 120 पर्यन्त है। इसके प्रक्षिप्त होने में सबसे पुष्ट प्रमाण यह है कि इस प्रसंग में सीता के प्रति राम के प्रेम में जो सहसा परिवर्तन दिखाया गया है वह अप्रत्याशित ही नहीं सर्वथा अस्वाभाविक भी है। (बुल्के, रामकथा-अनुच्छेद 565)। सीता-हरण के बाद राम के विरह का वर्णन बहुत सर्गों में किया गया है। युद्धकाण्ड के प्रारम्भ में स्वयं राम कहते हैं कि मेरा विरह-जनित शोक दिनो-दिन बढ़ता जाता है। (सर्ग-5 श्लोक-42)। लंकावरोध के बाद भी सीता के लिए राम की अभिलाषा- **जगाम मनसा सीता दूयमानेन चेतसा** (42/7) का वर्णन मिलता है। इन्द्रजित् द्वारा माया सीता के वध का समाचार सुनकर राम मूर्च्छित होकर गिर पड़ते हैं-

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा राघवः शोक मूर्च्छितः।
निपपात तदा भूमौ छिन्नमूल इव द्रुमः।। (83 /10)।

इससे स्पष्ट है कि सीता के प्रति राम का प्रेम अपरिवर्तित बना हुआ था, किन्तु यह सब होते हुए भी रावणवध के पश्चात् आई हुई सीता को देखकर राम के मुख से यह कहा जाना कि मैं अपने शत्रु के प्रति अपमान का प्रतिकार कर चुका हूँ, मुझे तुम्हारे प्रति कोई आकर्षण नहीं रहा। लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न, सुग्रीव अथवा विभीषण किसी को अपना पति चुन सकती हो। मुझे तुम्हारे चरित्र पर संदेह है। राम के इस तथाकथित वक्तव्य से यह निष्कर्ष निकलता है कि उनको सीता के सत्य वचन, जो उसके पतिव्रता होने और राम के प्रति ऐकान्तिक तथा आत्यन्तिक प्रेम के सूचक हैं, पर विश्वास नहीं हैं। पूर्व में सीता के प्रति रावण का वक्तव्य भी स्पष्ट है, जिसमें रावण ने सीता को पति के रूप में स्वीकार करने के लिए एक वर्ष का समय दिया था, अन्यथा वह रावण की पाकशाला की सामग्री बन जाएगी (अरण्यकाण्ड, सर्ग-55)। 10 मास व्यतीत हो जाने पर भी रावण के प्रस्ताव को जब सीता अस्वीकार कर देती है तब रावण क्रुद्ध होकर कहते हैं- निर्धारित अवधि के पूरे होने में 2 मास रह गए हैं। यदि तुम इसके बाद भी स्वेच्छा से मेरी पत्नी नहीं बनोगी तो मेरे रसोइए खण्डशः काटकर मेरे प्रातराश का भाग बना देंगे।

द्वाभ्यामूर्ध्वं तु मासाभ्यां भर्तारं मामनिच्छन्तीम्।
मम त्वं प्रातराशार्थे सूदाश्छेत्स्यन्ति खण्डशः।।
(सुन्दर., सर्ग-22 श्लोक- 9)

इससे स्पष्ट है कि रावण सीता का बलात्कार नहीं कर सकता था। ऐसी स्थिति में सीता के चरित्र के प्रति राम के संदेह का अवसर ही नहीं है और न इस तथाकथित अग्निपरीक्षा की आवश्यकता ही है। इस तथाकथित अग्नि परीक्षा के बाद राम का यह कथन कि मेरे मन में तो तुम्हारे प्रति संदेह नहीं था किन्तु जनता की दृष्टि में तुम्हारे इस शुद्धिकरण की आवश्यकता थी। बुलके के शब्दों में- 'इस प्रकार का दिखावा समस्त मूल वाल्मीकि रामायण की भावधारा के विरुद्ध है।' (बुलके, अनु. 565)।

इस प्रकरण (अग्निपरीक्षा) का प्रक्षेप अवतारवाद के स्वीकृत होने के बाद ही संभव हो पाया है। क्योंकि आगे लिखा है कि राम को वास्तविक दुःख नहीं है वे तो नर-लीला कर रहे हैं। राम और सीता दोनों क्रमशः विष्णु और लक्ष्मी के अवतार हैं। ब्रह्मा आदि देवता राम को विष्णु तथा सीता को लक्ष्मी का अवतार मानकर उनकी स्तुति कर रहे हैं। वाल्मीकि रामायण का यह एक मात्र स्थल हैं जहाँ सीता तथा लक्ष्मी की अभिन्नता का प्रतिपादन किया गया है (युद्धकाण्ड-117/27)।

इस प्रसंग के प्रक्षिप्त होने के कुछ और भी कारण हैं-

1. युद्धकाण्ड के 124 सर्ग में भारद्वाज ने तपोबल से रामकथा जानकर उसका जो वर्णन किया, उसमें यह प्रसंग नहीं है। इसी प्रकार 126 सर्ग में हनुमान् भरत को जो कथा सुनाते हैं, उसमें भी अग्निपरीक्षा का उल्लेख नहीं है।
2. बालकाण्ड के सर्ग-1 और सर्ग-3 में रामकथा की संक्षिप्त अनुक्रमणी दी गई है। सर्ग-1 वाली सूची में अग्निपरीक्षा है, सर्ग-3 वाली सूची में नहीं है। फादर कामिल बुलके का कहना है कि दोनों अनुक्रमणिकाओं (सर्ग-1 और सर्ग-3) का प्रमाणिक संस्करण अग्निपरीक्षा के विषय में मौन हैं (बुलके, रामकथा, पृ.-425, संस्करण-2004 ई.)।
3. उत्तरकाण्ड भी अग्निपरीक्षा के विषय में कुछ नहीं कहता। दो स्थलों पर राम सीता की निर्दोषता के प्रमाण का उल्लेख करते हैं। प्रथम बार सीता-त्याग के समय वह केवल देवताओं के साक्ष्य की चर्चा करते हैं। दूसरी बार वे वाल्मीकि से कहते हैं कि मैने लंका-निवास के बाद सीता को तभी ग्रहण किया जब उन्होंने अपने सतीत्व की शपथ खायी थी।

प्रत्ययश्च पुरा वृत्तो वैदेह्याः सुसन्निधौ।
शपथश्च कृतस्तत्र तेन वेश्म प्रवेशिता। (सर्ग-97, 3)।

यदि इस सर्ग के रचनाकाल में अग्निपरीक्षा का

वृत्तान्त प्रचलित होता तो यहाँ पर राम द्वारा अवश्य ही सीता के सतीत्व के सबसे महत्वपूर्ण प्रमाण का उल्लेख हुआ होता। अत: यह मानना पड़ेगा कि उत्तरकाण्ड की आधिकारिक कथावस्तु के लिपिबद्ध होने के पश्चात् ही अग्निपरीक्षा-विषयक प्रक्षेप युद्धकाण्ड का अंश बन गया है।

4. महाभारत के रामोपाख्यान से भी इस निर्णय (अर्थात् सीता की अग्निपरीक्षा की प्रक्षिप्तता) की पुष्टि होती है। रामायण के इस प्राचीनतम संक्षेप में कहीं भी अग्निपरीक्षा का निर्देश मात्र भी नहीं मिलता।

अग्निपरीक्षा के बाद के दो सर्ग (119-120) भी अनावश्यक हैं और पूरी तरह प्रक्षिप्त है। इनमें शिव राम की स्तुति करते हैं, स्वर्ग से राजा दशरथ भी दिखाई देते तथा इन्द्र राम का निवेदन स्वीकार कर मृत वानर-सैनिकों को जीवित कर देते हैं।

रामकथा के स्रोतों के रूप में वाल्मीकीय रामायण, अध्यात्म रामायण, कम्बन रामायण और तुलसीकृत रामचरितमानस ही सर्वोपरि प्रसिद्ध ग्रन्थ हैं। इनमें वाल्मीकि रामायण सबसे प्राचीन है। किन्तु उसमें कवियों-कथावाचकों एवं मत-मतान्तर के विरोधियों-समर्थकों के इतने हस्तक्षेप हुए हैं कि आज उसकी कथावस्तु में असली-नकली का भेद करना कठिन हो गया है।

जर्मनी के भारतविद्या विद् प्रो. याकोवी वाल्मीकि रामायण में उत्तरकाण्ड और बालकाण्ड को पूरी तरह प्रक्षिप्त मानते हैं, किन्तु पूरा बालकाण्ड प्रक्षिप्त नहीं हो सकता क्योंकि अयोध्यावर्णन, राजा, मंत्री, पुरोहित और नागरिकों का वर्णन, पुत्रेष्टि यज्ञ, राम-लक्ष्मण-भरत-शत्रुघ्न का जन्म, विश्वामित्र के साथ राम-लक्ष्मण का यज्ञ की रक्षा के लिए जाना, बला और अतिबला शक्ति की प्राप्ति, ताटका-वध, विश्वामित्र-यज्ञ की रक्षा, राम का विवाह और अयोध्या में प्रत्यागमन तक का वर्णन बालकाण्ड में ही वर्णित हैं। बालकाण्ड में रामकथा के अंशों का वर्णन सर्ग 1-8, 13, 14, 18-31, 66-73 तथा 77 कुल 33 सर्गों में ही समाहित हो जाता है। जबकि इस काण्ड में 80 सर्ग हैं। अत: बालकाण्ड का अधिकांश (जो रामकथा से सीधे सम्बन्धित नहीं है) तथा सम्पूर्ण उत्तरकाण्ड का प्रक्षिप्त होना सिद्ध हो जाता है।

वाल्मीकि रामायण में बालकाण्ड के प्रथम सर्ग में जो विषय-सूची दी गई है उसमें भी उत्तरकाण्ड में वर्णित घटनाओं का उल्लेख नहीं है। युद्धकाण्ड में ही रामकथा को समाप्त कर दिया गया है। सीता-निर्वासन उत्तरकाण्ड की मूल कथा है। अध्यात्म रामायण, तुलसीदास विरचित 'रामचरितमानस' एवं कंबन-प्रणीत तमिल रामायण में भी मूल वाल्मीकि रामायण के अनुकरण पर अयोध्या में राम-राज्याभिषेक तथा रामराज्य की स्थापना पर रामकथा को समाप्त कर दिया गया है। सीता के निर्वासन को सुप्रख्यात आधुनिक तमिल रामायण के लेखक चक्रवर्ती राजगोपालाचारी भी वाल्मीकि के राम चरित्रादर्श की कसौटी पर असंगत घटना मानते हैं। अपनी रामकथा **दशरथ-नन्दन श्रीराम** के कथानक में उन्होंने इसे सम्मिलित नहीं किया है। वे इसे प्रक्षिप्त प्रमाणित करते हैं।

रामकथा में अतिशयोक्तिपूर्ण अमानवीय वर्णन किस प्रकार विस्तार पाता है तथा लोक में रूढ़ हो जाता है इसका दिग्दर्शन रावण के 'दशशीर्ष' (दशानन) और 20 बीस भुजाओं के वर्णन में आप देख सकते हैं। रामायण में रावण के दस शिर उसकी सबसे बड़ी विशेषता बन गये जिसके बिना हम रावण की कल्पना नहीं कर सकते। जबकि वाल्मीकि रामायण, सुन्दरकाण्ड के 10 दसवें सर्ग के 8 आठ श्लोकों (10/15-22) में लगातार रावण की 2 दो भुजाओं का वर्णन है। आगे रावण और सुग्रीव का युद्ध हुआ, तब रावण ने दोनों हाथों से सुग्रीव को पकड़ कर जमीन पर दे मारा-**बाहुभ्यामाक्षिपत्तले** (युद्धकाण्ड, 40 /13)। मानना चाहिए कि मूलकथा में रावण के दो हाथ थे। दशग्रीव का अर्थ न समझकर परवर्ती संशोधकों ने बीस हाथ कर दिए। जहाँ तक दस शिरों की बात है, बुलके ने लिखा था-'रावण के दस सिर थे, हनुमान् समुद्र लांघते हैं और आकाश में उड़कर ओषधि-पर्वत ले आते हैं, इस प्रकार के कथन बहुतायत से पाये जाते हैं। फिर भी रावण का केवल एक सिर था, ऐसा वर्णन भी रामायण के कई स्थलों पर मिलता है। दशग्रीव नाम पहले रूपक के रूप में प्रयुक्त हुआ होगा (दशग्रीव अर्थात् जिसकी ग्रीवा दश अन्य साधारण ग्रीवाओं के समान बलवान हो) और बाद में वस्तुत: दशग्रीवा धारण करने वाले प्राणी के अर्थ में लिया जाने लगा।' (रामकथा : उत्पत्ति और विकास, पृ.-93, अनु.-112, संस्करण-2004)। आगे वासुदेवशरण अग्रवाल का हवाला देते हुए बुल्के ने अथर्ववेद का एक मंत्र उद्धृत किया है-

ब्राह्मणो जज्ञे प्रथमो दशशीर्षो दशास्य:।
स सोमं प्रथम: पपौ स चकाररसं विषम॥ (4/6/1)।

और लिखा है-'अथर्ववेद में एक दशास्य (दशमुख), दश शीर्ष ब्राह्मण का उल्लेख है। इसका प्रभाव भी रावण के स्वरूप की कल्पना पर पड़ा, यह असंभव नहीं कहा जा सकता है।' (बुल्के, रामकथा, पृ.-93 अनु.-112)। बुल्के के उक्त उद्धरण को देकर डॉ. रामविलास शर्मा 'रामकथा और डॉ. सुनीतिकुमार चटर्जी' शीर्षक स्व निबंध में लिखते हैं-'अथर्ववेद के मन्त्र में भी रूपक है जैसे कि मन्त्र पर सातवलेकर की पाद टिप्पणी से स्पष्ट है-'शीर्ष शब्द बुद्धि का और आस्य वक्तृत्व का वाचक है। दस गुणा बुद्धिमान् और दस गुणा विद्वान्, यह इस शब्द का भाव है। इस तरह के रूपकों की शुरुआत होती है ऋग्वेद के 'सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात्' (ऋग्वेद-10/90/1) आदि से। कुछ पौराणिकों ने रूपक का भाव न लेकर उसे तथ्यों का विवरण मान लिया। ऐसे ही विद्वानों ने रावण के एक सिर के दस सिर दिए, दो हाथों की जगह बीस हाथ कर दिए।' (रामविलास शर्मा, भारतीय साहित्य की भूमिका, पृ.-384-85, राजकमल प्रकाशन, संस्करण-2009 ई.)।

प्रक्षेपों की चर्चा केवल आधुनिक काल में ही हुई है, ऐसा नहीं है। वेदान्त दर्शन के द्वैतवाद के प्रवर्तक मध्वाचार्य (जन्म-1199 ई.) का अपरनाम 'आनंदतीर्थ' भी है। इन्होंने वेदान्त पर अपना 'पूर्णप्रज्ञ' नाम से भाष्य लिखा है। इनका एक दूसरा प्रसिद्ध ग्रन्थ **महाभारत-तात्पर्य-निर्णय** है। इसमें ये लिखते हैं- (2/3-4)

क्वचिद ग्रन्थान प्रक्षिपन्ति क्वचिदन्तरितानपि।
कुर्युः क्वचिच्चव्यत्यासं प्रमादात्क्वचिदन्यथा॥ 3॥
अनुत्सन्ना अपि ग्रन्था व्याकुला इति सर्वशः।
उत्सन्नः प्रायशः सर्वे कोट्यंशोऽपि न वर्तते॥ 4॥

इसका अर्थ यह है कि 'प्रक्षेपकर्ता केवल नवीन श्लोक बनाकर मूलग्रन्थ में प्रक्षेप ही नहीं करते, अपितु अनेक मूल श्लोकों (पाठों) को निकाल भी देते हैं। कहीं-कहीं मूल श्लोकों (पाठों) के कतिपय अंश मात्र का ही परिवर्तन कर उसके स्थान में स्थानान्तरित पाठ मिला देते हैं। इस प्रकार प्राचीन ग्रन्थकारों की कृतियों में बहुत ही व्यत्यास (उल्टा-पुल्टा या विपर्यय) हो गया है।' इसी का परिणाम यह है कि रामायण तथा महाभारत की मूलकथा में अनैतिहासिक और प्रत्यक्षादि प्रमाणों तथा सृष्टिक्रम के विरुद्ध असम्भव घटनाओं और इतिवृत्तों का बाहुल्य हो गया है। जिसके कारण अनेक विद्वान रामायण और महाभारत की कथा को कवि-कल्पित कथा के रूप में देखते हैं।

रामायण के विभिन्न संस्करण

1. पश्चिमी संस्करण-निर्णय सागर प्रेस (1888 ई.) और गुजराती प्रिन्टिंग प्रेस (1912-1920) से यह संस्करण प्रकाशित हुआ है। यह वाल्मीकीय रामायण के दक्षिणात्य पाठ का प्रतिनिधित्व करता है। यह पाठ अपेक्षाकृत अधिक प्रचलित और व्यापक है।

2. पूर्वोत्तर संस्करण (बंगीय संस्करण)-इसे गैसपर गौरेसियो (पैरिस) ने सम्पादित तथा प्रकाशित किया था। इसे गौडीय संस्करण भी कहते हैं। कलकत्ता सिरीज संस्करण से यही पाठ प्रकाशित हुआ था।

3. पश्चिमोत्तर संस्करण-इसे डीएवी कालेज लाहौर से पं. भगवद्दत्त, पं. रामलभाया तथा पं. विश्वबन्धु शास्त्री ने सम्पादित कर प्रकाशित कराया था।

4. आलोचनात्मक संस्करण (Critical Edition)-इसे बड़ौदा (Baroda) के महाराजा सयाजीराव विश्व विद्यालय के 'ओरियण्टल इंस्टीट्यूट' के विद्वानों ने दो सहस्र पाण्डुलिपियों के आधार पर शोध करके 1960 से 1975 पर्यन्त वाल्मीकि रामायण के सात काण्ड सात भागों में प्रकाशित किया है। इसे 'समीक्षित आवृत्ति' कहा जा सकता है।

वाल्मीकि रामायण के प्रचलित संस्करणों में 7 सात काण्ड, 645 सर्ग तथा 24, 049 श्लोक प्राप्त होते हैं। बड़ौदा के ओरियंटल इंस्टीट्यूट द्वारा प्रकाशित आलोचनात्मक संस्करण में 7 सात काण्ड, 606 सर्ग तथा 18, 766 श्लोक प्रकाशित किए गए हैं।

ईसा की तीसरी शती उत्तरार्ध की रचना **अभिधर्म महाविभाषा** में रामायण का उल्लेख है, जिसमें यह लिखा है कि 'रामायण' नामक ग्रन्थ में 12000 बारह हजार श्लोक हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि ईसा की तीसरी शती में रामायण का कलेवर आजकल प्रचलित रामायण का आधा था तब 'आदि रामायण' (वाल्मीकि) में मूल श्लोकों की संख्या और भी कम (न्यून) रही होगी।

2021 ई. में श्रीमद्-वाल्मीकीय-रामायणम् (शोधितम्) के सँस्कर्ता और सम्पादक श्री निरञ्जनलाल माङ्गल ने वाल्मीकीय रामायण में मूल श्लोकों की संख्या-3607 तीन हजार छहः सौ सात निर्धारित की है और तदनुसार प्रकाशित भी किया है। इनकी अवधारणा है कि युद्धकाण्ड

ही उत्तरकाण्ड है, पृथक् रूप में उत्तरकाण्ड नहीं है। इस प्रकार 6 छह: काण्ड, प्रति काण्ड में 24 चौबीस सर्ग तथा प्रति सर्ग 24 चौबीस श्लोक हैं। इनके इस मनोरम निष्कर्ष के लिए द्रष्टव्य है- इनके द्वारा प्रकाशित 'वाल्मीकीय रामायणम्' की भूमिका संस्कृत भाषा में तथा अंग्रेजी में Preface For English तथा परिशिष्टम्-7 (प्रकाशक- दिव्य प्रकाशन, दिव्य योग मन्दिर ट्रस्ट, कृपालु बाग आश्रम, कनखल, हरिद्वार-249408, उत्तराखण्ड)।

रामायण के शोधपूर्ण प्रस्तुतीकरण के अनेक प्रयास पूर्व में हुए हैं। प्रतिष्ठित प्रकाशकों तथा लेखकों ने 'संक्षिप्त रामायणम्' छापे हैं। आर्यसमाज के क्षेत्र में ब्रह्मचारी अखिलानन्द ने सम्पूर्ण रामायण को प्रचलित पाठ के अनुरुप छापते हुए भी स्वमन्तव्यानुसार प्रक्षिप्त श्लोक और उसके अर्थ भी भिन्न टाइप में प्रकाशित किए हैं। महामहोपाध्याय आर्यमुनिजी कृत 'रामायणार्य भाष्य' (दो भाग) की आर्यसमाज की पहली पीढ़ी में अच्छी खासी चर्चा थी। श्रीपाद दामोदर सातवलेकर जी की रामायण टीका अपने ही ढंग की निराली थी। पण्डित प्रेमचन्द्र शास्त्री विद्याभास्कर द्वारा सम्पादित 'वाल्मीकि रामायण' को गोविन्दराम हासानन्द दिल्ली ने प्रक्षिप्तांश रहित तथा अर्थ सहित धारावाही संस्करण प्रकाशित किया था। स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती ने भी प्रक्षेप रहित रामायण को पठनीय तथा रोचक बनाने का सत्प्रयास किया। किन्तु उनके द्वारा पाठ का निर्धारण और उसके पौर्वापर्य में स्वेच्छाचारिता का आश्रय लिया गया जो विद्वज्जनमनोरम नहीं है। ईश्वरीप्रसाद 'प्रेम' द्वारा प्रस्तुत हिन्दी भाषा में 'शुद्ध रामायण', 'शुद्ध हनुमच्चरित' भी आर्य जगत् में बहु प्रशंसित हैं।

रामायण को आधार बनाकर छोटी-बड़ी अनेक पुस्तकें आर्य विद्वानों ने प्रकाशित की हैं। जिनमें स्वामी ब्रह्ममुनि की 'रामायण दर्पण' तथा स्वामी जगदीश्वरानन्द की 'मर्यादा-पुरुषोत्तम श्रीराम' पुस्तक का प्रचार-प्रसार अधिक हुआ। शास्त्रार्थ महारथी ठाकुर अमर सिंह (महात्मा अमर स्वामी परिव्राजक) द्वारा रचित 'रामायण दर्पण' (रामायण सम्बन्धी भ्रमों का निवारण) भी आर्यसमाज के क्षेत्र में बहुपठित तथा बहुप्रशंसित है। *(हरियाणा के टोहाना में जन्मे प्रसिद्ध आर्य कवि श्री यशवन्तसिंह वर्म्मा टोहानवी कृत आर्य संगीत रामायण ने भी बहुत ख्याति प्राप्त की है। इन्होंने कई प्रक्षिप्त प्रकरणों का पादटिप्पणियों में निरसन किया है- सम्पादक)* इसी सन्दर्भ में **रामायण सन्दर्शिका** संस्कृत साहित्य के एक तरुण विद्वान् श्री यशपाल जी के गहन अध्ययन तथा शोध-दृष्टि का सुपरिणाम है। अनेक आर्यलेखकों ने रामायण के विभिन्न पात्रों तथा विशिष्ट घटनाओं के सन्दर्भ में लोक प्रचलित अवधारणाओं का निरसन करते हुए उसका सटीक-संयुक्तिक-तर्क-प्रमाण-पुरस्सर समाधान प्रस्तुत किया है, किन्तु इस युवा अधीती ने रामायण के विभिन्न संस्करणों तथा अनेकविध पाठों के तुलनात्मक अध्ययन के माध्यम से यथार्थ वस्तुस्थिति प्रस्तुत की है। इस नूतन ग्रन्थ से रामायण विषयक साहित्य में श्रीवृद्धि होगी तथा रामायण के रसिक-जनों को आनन्द की प्राप्ति भी।

सदूषणापि निर्दोषा सखरापि सुकोमला।
नमस्तस्मै कृताय येन रम्या रामायणीकथा।
(त्रिविक्रमभट्ट-नलचम्पू)

कड़वे मीठे बोल

❍ उस इंसान को कोई नहीं बदल सकता, जिसे अपनी गलती दिखती नहीं।

❍ तलवार के घाव मिट जाते हैं, लेकिन बातों के घाव सदा याद रहते हैं।

❍ जो इंसान अच्छे विचार और अच्छे संस्कार पकड़ लेता है, उसे हाथ में माला पकड़ने की जरूरत नहीं।

❍ जो नजरों से गिर जाए उसे उठाना नहीं,
जिंदगी में तकलीफ आ जाए घबराना नहीं।

❍ मां की ममता की तारीफ ना पूछ ए दोस्त
एक नन्ही सी चिड़िया अपने बच्चों को बचाने के लिए जहरीले सांप से भी लड़ जाती है।

❍ बुरा हो वक्त तो सब आजमाने लगते हैं।
बड़ों को छोटे भी आंखें दिखाने लगते हैं।

❍ आजकल के रिश्तों से अच्छी तो मोबाइल की बैटरी है,
खत्म होने से पहले वार्निंग तो दे देती है।

❍ जो लोग अपनी गलती नहीं मानते वे लोग आपको अपना कैसे मानेंगे।

-प्रोफेसर शाम लाल कौशल
मोबाइल--9426359045
रोहतक-124001 (हरियाणा)

आओ वेद पढ़ें-5

ऋग्वेद का चतुर्थ सूक्त

❑**आचार्य रामफल सिंह आर्य,** (9418277714)
2080, प्रथम तल, G ब्लॉक, सैक्टर 57, गुरुग्राम-122003

जैसे मनुष्य गाय के दूध को प्राप्त होके अपने प्रयोजन को सिद्ध करता है, वैसे ही विद्वान् धार्मिक पुरुष भी परमेश्वर की उपासना से श्रेष्ठ विद्या आदि गुणों को प्राप्त करके अपने कार्यों को पूर्ण करते हैं।

आज हम ऋग्वेद के प्रथम मंडल के चौथे सूक्त पर कुछ विचार करेंगे। हमें विश्वास है कि हमारे पूर्व के लेखों से सत्य ज्ञान के पिपासु पाठकों को अवश्य ही कुछ लाभ हुआ होगा और पावन वेदमाता के प्रति उनकी श्रद्धा में भी अभिवृद्धि हुई होगी। जैसे-जैसे स्वाध्याय का क्रम आगे बढ़ता रहेगा वैसे-वैसे यह श्रद्धा भी आगे बढ़ती रहेगी जिससे वेदों के बारे में फैली भ्रांत धारणाओं का उन्मूलन हो सकेगा।

बहुत समय पहले व्यापक स्तर पर निकलने वाली मासिक पत्रिका, जो एक पुस्तक के आकार में छपती थी, 'सरिता' उसका नाम था, उसमें एक लेखमाला आती थी- 'वेदों में क्या है?' इससे वेदों के बारे में जन सामान्य में अश्रद्धा के साथ-साथ अनेक भ्रांतियां फैलाने का कार्य किया जा रहा था। उन्होंने इसी शीर्षक से कुछ स्वतंत्र पुस्तकें भी छापी थीं। अर्थों का अनर्थ करते हुए नास्तिक समुदाय द्वारा ऐसे कुछ प्रयास समय-समय पर होते ही रहते हैं। इससे उनका कुछ लाभ हो या न हो परंतु सीधे-सादे लोगों की हानि अवश्य होती है। ऐसे में हमें श्री भर्तृहरि जी की यह उक्ति सहसा स्मरण हो आती है-

एके सत्पुरुषाः परार्थघटकाः स्वार्थान्परित्यज्य ये
सामान्यास्तु परार्थमुद्यमभृतः स्वार्थाऽविरोधेन ये।
तेऽमि मानुषराक्षसाः परहितं स्वार्थाय निघ्नन्ति ये
ये तु घ्नन्ति निरर्थकं परहितं ते के न जानीमहे। (नीति. 57)

अर्थात् जो अपने स्वार्थ को त्यागकर दूसरों की भलाई करते हैं, वे सज्जन पुरुष हैं। जो अपने स्वार्थ का विरोध न करके दूसरों की भलाई के लिए प्रयास करते हैं, वे सामान्य लोग हैं। जो स्वार्थ के लिए दूसरों का हित समाप्त करते हैं वे मनुष्य रूप में राक्षस हैं और जो बिना किसी प्रयोजन के दूसरों का हित नष्ट करते हैं वे कौन हैं? यह हम नहीं जानते। वेदों के बारे में दुष्प्रचार करने वाले इसी श्रेणी में आते हैं। अस्तु। आईये अपने विषय में आगे बढ़ते हैं।

चौथे सूक्त में दस मंत्र हैं। इन सभी का देवता इन्द्र है। ऋषि मधुच्छन्दा और छन्द गायत्री, विराज्गायत्री और निचृद्गायत्री हैं। प्रथम मंत्र है-

सुरूपकृत्नुमूतये सुदुघामिव गोदहे। जुहूमसि द्यविद्यवि।।

पदार्थ : (सु) जैसे दूध की इच्छा करने वाला मनुष्य (गोदहे) दूध दोहने के लिए (सुदुघाम) दूध देने वाली गायों को दोह के अपनी कामनाओं को पूर्ण कर लेता है, वैसे हम लोग (द्यवि द्यवि) सब दिन अपने निकट स्थित मनुष्यों को (ऊतये) विद्या की प्राप्ति के लिए (सुरूपकृत्नुम्) परमेश्वर जो कि अपने प्रकाश से सब पदार्थों को उत्तम रूपयुक्त करने वाला है उसकी (जूहूमसि) स्तुति करते हैं।

भावार्थ : इस मंत्र में उपमालंकार है। जैसे मनुष्य गाय के दूध को प्राप्त होके अपने प्रयोजन को सिद्ध करता है, वैसे ही विद्वान् धार्मिक पुरुष भी परमेश्वर की उपासना से श्रेष्ठ विद्या आदि गुणों को प्राप्त करके अपने कार्यों को पूर्ण करते हैं।

यहाँ पर एक सुंदर उपमा के द्वारा बतलाया गया है कि जब कोई व्यक्ति दूध की इच्छा करता है तो वह दूध देने वाली गाय के पास जाकर दूध को प्राप्त कर लेता है। दूध प्राप्त करना है तो गाय के पास जाना ही पड़ेगा और गाय भी दूध देने वाली होनी चाहिए। ऐसे ही विद्वान् पुरुष भी श्रेष्ठ विद्या आदि गुणों की प्राप्ति ईश्वर की उपासना से कर सकते हैं। ध्यान दीजिये- 'विद्वान् पुरुष' ईश्वर की उपासना से श्रेष्ठ गुणों की प्राप्ति कर सकता है। अविद्वान् तो ईश्वरोपासना भी न कर सकेगा और न ही श्रेष्ठ गुणों को धारण कर सकेगा। क्योंकि जिसके पास जो वस्तु होती है उसी से वह प्राप्त की जा सकती है। जैसे दूध की इच्छा रखने वाला गाय को चाहता है, वैसे ही विद्या आदि श्रेष्ठ गुणों को चाहने वाला ईश्वर की उपासना करे अर्थात् उसी के समीप जाये। ईश्वर ही समस्त ज्ञान, बल, विद्या, आदि का भंडार है। एक बात और ध्यान देने योग्य है- 'श्रेष्ठ विद्या आदि गुण' अर्थात् जो भी हम प्राप्त करें वह

श्रेष्ठ हो, शुभ हो। ज्ञान, बल, विद्या यदि श्रेष्ठ नहीं है तो कल्याण करने के स्थान पर अकल्याण का ही कारण बनेगा। अत: श्रेष्ठतायें चाहिएँ तो वह ईश्वर की उपासना से ही मिलेंगी। ये गुण ईश्वर से तो प्राप्त होते ही हैं साथ-साथ धार्मिक सज्जनों की संगति से भी प्राप्त होते हैं। यही बात आगे तीसरा मंत्र बता रहा है-

अथा ते अन्तमानां विद्याम् सुमतीनाम्।
मा नो अति ख्य आगहि।। 3

अर्थात् हे परम ऐश्वर्ययुक्त परमेश्वर! आपके निकट अर्थात् आपको जानकर आपके समीप तथा आपकी आज्ञा में रहने वाले विद्वान् लोग जिनकी वेदादि शास्त्र, परोपकार और धर्माचरण करने में श्रेष्ठ वृत्ति हो रही है, उनके समागम से हम लोग आपको जान सकते हैं और आप हमको प्राप्त अर्थात् हमारी आत्माओं में प्रकाशित होवें और इसके करके अंतर्यामी रूप से हमारे आत्माओं में स्थित हुए सत्य उपदेश को मत रोकिये किन्तु उसकी प्रेरणा सदा किया कीजिये।

इस मंत्र में अनेक प्रकार की प्रार्थनायें आ गई हैं यथा ईश्वर को जानना, उसके समीप बैठना, जिन्होंने यह कार्य कर लिये हैं उनकी संगति में बैठना, उनसे अनेक विद्याओं को ग्रहण करना, परोपकार और धर्माचरण से जिन्होंने वृद्धि को प्राप्त किया है उनसे इन गुणों को सीखना आदि। और यह सब किसलिये करें? कि ईश्वर का साक्षात्कार कर सकें। वह हमारे आत्माओं में प्रकाशित हो जाये जिससे कि हमारी निरंतर उन्नति ही होती जाये। इस मंत्र के भावार्थ में तो ऋषिवर लिखते हैं - ऐसे श्रेष्ठ विद्वानों के समागम अर्थात् उनकी संगति से शिक्षा और विद्या प्राप्त होती है, तभी पृथिवी से लेकर परमेश्वर पर्यन्त पदार्थों के ज्ञान द्वारा नाना प्रकार से सुखी होकर और ईश्वर के उपदेश को छोड़ कर इधर-उधर नहीं भटकते।

इनमें से कुछ बातें आपको साधारण लग सकती हैं, परन्तु यह स्मरण रखना चाहिए कि अत्यन्त साधारण सी लगने वाली बातें भी अति गहन और व्यापक हो सकती हैं। सब प्रकार से उच्च शिक्षित भी हो गये, बड़ी-बड़ी उपाधियां भी प्राप्त कर लीं, उच्च पदों पर भी आसीन हो गये परन्तु आचरण में शुद्धता नहीं आई तो उसका परिणाम कभी भी समाज या राष्ट्र के हित में नहीं होता। जितना बड़ा पद उतना बड़ा भ्रष्टाचार! क्या यह आपको आज के वातावरण में दृष्टिगोचर नहीं होता? बिना घूस लिये किसी का काम करवाना नहीं, जहां दांव लगे वहां करोड़ों रुपये के घोटाले, देश की सुरक्षा तक को लालच में फंस कर दांव पर लगा देना, अपराधियों, गुंडों और आतंकियों से सांठ-गांठ, सरकारी साधनों का खुलकर दुरुपयोग क्या प्रतिदिन देखने को नहीं मिलता? क्या इसी का नाम शिक्षा है? यह उत्थान है या पतन? आज सड़क बनाईं, एक महीने में ही टूट गईं। बनते-बनते पुल का ढह जाना, नकली दवायें, मिलावटी खाद्य पदार्थ यह सब आज कौन कर रहा है? पढ़े लिखे या अनपढ़?

इसी लिए वेद में बार-बार आता है कि हमारा ज्ञान और बल ईश्वर से आया हुआ है। ईश्वर हमारी आत्मा में प्रकाशित रहे। हमें सदा स्मरण रहे कि वह हमें लगातार देख रहा है। ज्ञान भी कैसा हो -पृथ्वी से लेकर परमेश्वर पर्यन्त- भौतिक विज्ञान का भी ज्ञान हो और आध्यात्मिक विज्ञान का भी। अपितु भौतिक ज्ञान आध्यात्मिक ज्ञान से मर्यादित हो। अगला मंत्र देखिये-

परेहि विग्रमस्तृतमिन्द्रं पृच्छा विपश्चितम्।
यस्ते सखिभ्य आ वरम्॥ (4)

अर्थात् सब मनुष्यों को यही योग्य है कि प्रथम सत्य का उपदेश करने हारे, वेद पढ़े हुए और परमेश्वर की उपासना करने वाले विद्वानों को प्राप्त होकर अच्छी प्रकार उनके साथ प्रश्नोत्तर की रीति से अपनी शंका निवृत्त करें, किन्तु विद्याहीन मूर्ख मनुष्य का संग या उनके दिये हुए उत्तरों में विश्वास कभी न करें।

कितनी सुंदर बात कही है ऋषिवर ने! हम किन लोगों से शिक्षा ग्रहण करें? सत्य का उपदेश करने वाले, वेद के विद्वान् और ईश्वर की उपासना करने वालों से। ऐसे ही लोगों के पास जाकर भली प्रकार से प्रश्नोत्तर करके अपने संदेहों को निवृत्त करें। लेकिन मूर्ख और विद्याहीन लोगों की बातों पर कभी विश्वास न करें।

श्रेष्ठ विद्वान्, ईश्वर का उपासक कभी किसी को अनुचित मार्ग पर लेकर नहीं जायेगा। तनिक एक दृष्टि महाभारत की ओर डालिये। पाण्डवों का मार्गदर्शक कौन था? श्रीकृष्ण जी महाराज, जो सदा उन्हें सही मार्ग ही दिखाते थे। और कौरवों का मार्गदर्शक कौन था? शकुनि समेत चाण्डाल चौकड़ी। सदा उल्टी सीधी राय देकर विनाश के कगार पर खड़ा कर दिया। इसीलिए कहा कि हम वेद के विद्वान् और ईश्वर के उपासक की बात मानें। आज न जाने कितने लोग ढोंग-टोना करने वाले, बाबाओं, तान्त्रिकों,

ज्योतिषियों और स्वार्थी लोगों के जाल में फंसकर अपना धन, समय, सम्मान तथा जीवन तक गंवा रहे हैं और कष्ट भी उठा रहे हैं। महर्षि मनु तो कहते हैं कि एक ओर वेद का विद्वान यदि अकेला भी क्यों न हो उसकी बात को मानना चाहिए न कि दूसरी ओर सहस्रों मूर्खों की भीड़ की बात को।

एकोऽपि वेदविद्धर्मं व्यवस्येद् द्विजोत्तमः।
स विज्ञेयः परो धर्मो नाज्ञानामुदितोऽयुतैः ॥ (12/113)

आगे पांचवे मंत्र **उत ब्रुवन्तु नो निदो**-- का भी ऐसा ही भाव है। सदैव आप्त धार्मिक विद्वानों का संग करें और मूर्खों के संग को सर्वथा छोड़ दें। पुरुषार्थ ऐसा करें कि जिससे सर्वत्र विद्या की वृद्धि, अविद्या की हानि, मानने योग्य श्रेष्ठ पुरुषों का सत्कार, दुष्टों को दंड, ईश्वर की उपासना आदि शुभ कर्मों की वृद्धि और अशुभ कर्मों का विनाश नित्य होता रहे। प्रिय पाठकगण! आप यदि ध्यानपूर्वक देखेंगे तो आप को पता चल जायेगा कि महर्षि दयानन्द जी ने जो आर्यसमाज के नियम बनाये हैं, वे सारे वेद मंत्रों के आधार पर ही बनाये हैं। उपर्युक्त शब्दों में क्या आपको 'विद्या की वृद्धि और अविद्या का नाश करना चाहिए' यह नियम स्पष्ट रूप से दिखाई नहीं दे रहा। छठे मंत्र पर भी दृष्टि डालिये-

उत नः सुभगाँ अरिर्वोचेयुर्दस्म कृष्टयः।
स्यामेदिन्द्रस्य शर्मणि ॥ 6 ॥

भाव यह है कि जब सब मनुष्य विरोध को छोड़कर सबके उपकार करने में प्रयत्न करते हैं तब शत्रु भी मित्र हो जाते हैं, जिससे सब मनुष्यों को ईश्वर की कृपा से निरंतर उत्तम आनंद प्राप्त होते हैं। यह विशेषता केवल वेद की ही हो सकती है कि ऐसी सर्वभौमिक कल्याण की बात कही गई है। मत मजहबों की पुस्तकों में यह विशालता एवं उदारता कहीं देखने को भी नहीं मिलती।

सातवां मंत्र - **एमाशुमाशवे भर यज्ञश्रियम्**-- कह रहा है कि ईश्वर पुरुषार्थी मनुष्य पर कृपा करता है, आलस करने वाले पर नहीं, क्योंकि जब तक मनुष्य ठीक-ठीक पुरुषार्थ नहीं करता तब तक ईश्वर की कृपा और अपने किये हुए कर्मों से प्राप्त हुए पदार्थों की रक्षा करने में भी कभी समर्थ नहीं हो सकता।

यह था आर्यावर्त्त का आदर्श-जो कुछ भी प्राप्त करना है वह पुरुषार्थ से ही करना है। उसे छोड़ कर आज हम बिना पुरुषार्थ किये सब कुछ पा लेने की दौड़ में सम्मिलित हो गये हैं। ईश्वर को भी ऐसा ही समझ लिया है। हे भगवान! मेरा यह कार्य पूर्ण कर दो तो मैं इतने रुपये का दान मंदिर या अमुक स्थान को दूँगा। कहाँ से कहाँ पहुंच गये।

आठवें और नवें मंत्र का एक समान ही भाव है- जो मनुष्य दुष्टों के साथ धर्मपूर्वक युद्ध करता है उसी का विजय होता है। जो जितेन्द्रिय होकर ईश्वर की आज्ञा का पालन करता है, वही उत्तम धन को प्राप्त करने वाला और शत्रुओं को जीतने वाला होता है। वेद में अनेक स्थानों में युद्धों का वर्णन आता है - ये युद्ध आन्तरिक और बाह्य दोनों प्रकार के शत्रुओं के साथ हैं। काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि आन्तरिक शत्रु हैं और चोर, लुटेरे, आततायी बाह्य शत्रु। बाह्य शत्रुओं से आन्तरिक शत्रु अधिक प्रबल हैं।

यो रायो३वनिर्महान्त्सुपारः सुन्वतः सखा।
तस्मा इन्द्राय गायत। 10

भावार्थ : किसी मनुष्य को परमेश्वर की स्तुतिमात्र से सन्तोष न करना चाहिए किन्तु उसकी आज्ञा में रहकर और ऐसा समझकर कि परमेश्वर मुझको सर्वत्र देखता है, इसलिए अधर्म से निवृत्त होकर और परमेश्वर के सहाय की इच्छा करके मनुष्य को सदा उद्योग में ही वर्तमान रहना चाहिए।

प्रिय पाठकगण! यह ऐसा सूत्र है जो मनुष्य के लिये सफलता के द्वार तो खोलता ही है, साथ ही उसे स्वाभिमानी भी बना देता है। बिना पुरुषार्थ के प्राप्त हुआ धन आदि मनुष्य को आलसी, निकम्मा और व्यस्त तो बना सकता है परन्तु स्वाभिमानी नहीं बना सकता। स्वाभिमान तो स्वयं के पुरुषार्थ से उत्पन्न हुई वस्तु से आता है। ईश्वर से प्रार्थना तो करनी है, परन्तु साथ-ही साथ अपनी पूरी शक्ति भी इच्छित वस्तु के प्राप्त करने में लगा देनी है। इसलिए आत्मा के लिये वेद में 'क्रतु' शब्द अनेक बार आया है। क्रतु का अर्थ है- कर्म करने वाला। ईश्वर के लिये 'शतक्रतु:' शब्द आया है, अर्थात् बहुत कर्म करने वाला। बहुम कर्म करने वाला आलसी को कैसे चाह सकता है? जैसा कि हमने पूर्व में भी लिखा था कि इस सूक्त का देवता इन्द्र है- ऐश्वर्यशाली है। ईश्वर के पास सब प्रकार का ऐश्वर्य है। उसे प्राप्त करने के लिये इन्द्र बनने का प्रयास करना है। उसका ऐश्वर्य उसके लिये नहीं अपितु जीवात्मा के लिये है। उसे इन्द्र बनना है। ऐश्वर्यशाली बनेगा ईश्वर के गुणों को धारण करके। उसके गुण धारण करेगा उसकी उपासना से, समीपता से, मित्रता से। यही उपदेश इन मंत्रों में अलग अलग रूप में आया है। आओ इन्द्र बनें।

प्रभो! मुझे वाणी की मधुरता प्रदान कीजिये

❑श्री अशोक कौशिक

ऐसी वाणी बोलिये, मन का आपा खोय।
औरन को शीतल करे, आपहु शीतल होय।।

ऋग्वेद के दूसरे मण्डल के इक्कीसवें सूक्त के छठे मंत्र में जहाँ उल्लासमय जीवन के लिऐ अनेक प्रार्थनायें की गई हैं, वहीं 'वाचः स्वाद्मानं धेहि' अर्थात् 'प्रभो! मुझे वाणी की मधुरता प्रदान कीजिये' भी कहा गया है। मनुष्य-जीवन में वाणी का बड़ा महत्त्व है। वाणी को मनुष्य का सबसे बड़ा आभूषण कहा गया है। नीति-शतक के एक श्लोक का सारांश है- मनुष्य को उसकी सुसंस्कृत वाणी ही अलंकृत करती है, अन्यान्य आभूषण तो क्षीयमाण हैं, वाणी रूपी आभूषण ही वास्तव में मनुष्य का आभूषण है। रहीम ने भी कहा है-

'रहिमन कड़वे वचन तें दुःख उपजत चहुं ओर।'

महाभारत युद्ध के अनेक कारणों में से एक कारण वाणी का दुरुपयोग भी है। दुर्योधन प्रकृत्या महत्त्वाकांक्षी और ईर्ष्यालु तो था ही, बिना सोचे-समझे द्रोपदी, अर्जुन, कृष्ण, नकुल, सहदेव और भीम के वचन तथा उपहासपूर्ण व्यवहार ने उसकी ईर्ष्याग्नि में घृत का कार्य किया था।

युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ के समय उसको भण्डार-गृह का अधिपति बनाया गया था। विभिन्न देशों के राजा-महाराजाओं द्वारा दी जाने वाली भेंट और उपहार को संभालने का कार्य दुर्योधन को सौंपा गया था। उस समय इतनी अपार सम्पत्ति, धन-दौलत, आभूषण आदि एकत्र हो गये थे कि दुर्योधन की आंखें चौंधिया गईं। वह ईर्ष्या से दहकने लगा था और इससे उसका मानसिक संतुलन बिगड़ने लगा था।

उसकी ऐसी दशा देखकर शकुनि ने धृतराष्ट्र से इसका वर्णन किया तो धृतराष्ट्र ने दुर्योधन को बुला कर कहा- 'पुत्र! तुम्हारे पास भी किसी वस्तु की कमी तो नहीं, तुम्हारे लिये भी पाण्डवों जैसा सभागार बनवाया जा सकता है। अतः तुम पाण्डवों की समृद्धि को देखकर अपना मन छोटा मत करो। यह सुनकर दुर्योधन अपनी व्यथा का बखान करते हुए बोला- 'तात! युधिष्ठिर के सभा-भवन को विन्दुसर के रत्नों से, जिसके ऊपर स्फटिक मणि भी लगी हुई थी, ऐसा रचा है कि उसका फर्श मुझे कमलों से सजे पानी से लबालब भरी वापी (बावड़ी) प्रतीत हुई। मैंने उधर से जाते हुए अपने कपड़े ऊपर को उठा लिये तो भीम खिलखिला कर हँस पड़ा। उसके हँसने का एक भाव यह भी था कि उसके पास अपार ऐश्वर्य है और मैं निरैश्वर्य हूँ। उस समय मन में आया कि उसका वहीं पर गला घोंट दूँ, किन्तु तभी मेरी समझ में आ गया कि यदि मैंने ऐसा किया तो मेरी भी वही गति होगी जो शिशुपाल की हुई थी।

शत्रु द्वारा किया गया इस प्रकार का उपहास मुझे जलाये डाल रहा है। मैंने आगे चलकर फिर देखा कि वैसी ही कमलों से सजी एक अन्य बावड़ी है, मैंने पहले के समान उसे भी रत्नकमल जड़ित पत्थर ही समझा और मैं आगे बढ़ा तो पानी में गिर पड़ा। यह देखकर कृष्ण और अर्जुन ठहाका मारकर हंसे तो द्रोपदी भी अपनी सखियों के साथ खिलखिला पड़ी। इस उपहास से मुझे मर्मान्तक वेदना हुई। पाण्डवों के सेवकों ने मेरे लिये अन्य वस्त्रों की व्यवस्था कर दी। हे राजन्! और भी जो धोखा हुआ वह भी सुनिये। एक दीवार पर द्वार सा प्रतीत होता था, जब मैं उससे निकलने लगा तो मेरा मस्तक दीवार से टकरा कर चोटिल हो गया। नकुल और सहदेव ने यह देखकर मुझे अपनी बाहों में थामते हुए खेद व्यक्त किया और बोले राजन! द्वार यह है, वह नहीं। उसी समय उच्च स्वर में हँसते हुए भीम ने कहा- धृतराष्ट्रपुत्र! द्वार यह है, वह नहीं। धृतराष्ट्रपुत्र कहकर प्रकारान्तर से उसने मुझे अन्धे का अन्धा ही कह दिया।

इस सारे प्रकरण से स्पष्ट है कि पाण्डवों का गर्व मिश्रित यह उपहास और उसे धृतराष्ट्रपुत्र कहकर पुकारना, जिससे दुर्योधन को अंधा कहना ध्वनित होता है, साधारण बात नहीं, अपितु व्यावहारिक दृष्टि से यह बहुत बड़ी भूल थी। कटु और व्यंग्यात्मक वाणी और मधुर वाणी में यही अन्तर है। नम्रवाणी तो जादू का सा प्रभाव डालती है। इसीलिये हमने ऊपर लिखा है कि महाभारत युद्ध का एक

कारण वह कटुवाणी भी थी जिसने दुर्योधन को विचलित कर दिया और उसने युधिष्ठिर की उस सम्पत्ति को हड़पने के उपाय में पाण्डवों को वनवास तक दिला दिया।

इसके विपरीत महाभारत का ही वह प्रसंग भी है जब महाभारत युद्ध आरम्भ ही होने वाला था और समुद्र के समान विशाल सेनायें युद्ध भूमि पर खड़ी थीं तब युधिष्ठिर अपने शस्त्रास्त्र अपने रथ पर रख कर हाथ जोड़ता हुआ शत्रु सेना की ओर बढ़ चला। उसे इस प्रकार जाता देखकर अर्जुन भी उसी प्रकार उसके पीछे-पीछे चलने लगा तो कृष्ण सहित सभी पाण्डव भी चलने लगे। पर कहाँ और क्यों जा रहे हैं यह किसी को ज्ञात नहीं था। उनकी यह दशा देखकर कृष्ण ने कहा- 'भैया युधिष्ठिर सर्वप्रथम भीष्म, द्रोण, कृप और शल्य की अनुमति लेकर शत्रु से युद्ध करेंगे।'

उधर युधिष्ठिर को कौरव सेना की ओर आता देखकर कौरवों के सैनिक यह अनुमान करने लगे कि हमारी सेना की विशालता को देखकर युधिष्ठिर युद्ध न करने का विचार व्यक्त करने आ रहा है। इस प्रकार चलते हुए युधिष्ठिर ने शस्त्रास्त्र से सज्जित भीष्म के सम्मुख जाकर उनके चरण पकड़ कर कहा- 'तात! आपसे आपके विरुद्ध युद्ध करने की अनुमति लेने के लिए हम लोग आपकी सेवा में उपस्थित हुए हैं। कृपया आज्ञा और आशीर्वाद देकर हमें अनुग्रहीत कीजिये।' भीष्म युधिष्ठिर के श्रद्धापूर्ण तथा स्नेहिल वचनों को सुनकर गद्‌गद् हो गये और बोले- 'पुत्र! मैं प्रसन्न हुआ, तुम युद्ध करो और विजय प्राप्त करो।'

इसी प्रकार युधिष्ठिर द्रोण, कृप और शल्य के पास गये और उन सब पर भी उसकी वाणी का वही प्रभाव हुआ जो भीष्म पर हुआ था। उन्होंने भी आशीर्वाद देकर उसके विजय की कामना की। उसके बाद युधिष्ठिर कौरव सेना की ओर उन्मुख होकर बोले -जो योद्धा हमें न्याय के मार्ग पर समझ कर हमारी सेना में आना चाहते हों हम उन्हें गले लगाने को उद्यत हैं। यह सुनकर दुर्योधन का सहोदर भाई 'युयुत्सु' बोला- 'यदि आप मुझे अपना सकें तो मैं आपकी ओर से कौरवों से लड़ने को उद्यत हूँ।' युधिष्ठिर ने उसे गले लगाया और कहा- 'प्रतीत होता है युद्धोपरान्त धृतराष्ट्र के नामलेवा तुम ही रहोगे।'

यह बात दूसरी है कि यदि भीष्म आदि इस परिस्थिति के उपस्थित होने से पूर्व ही दुर्योधन को कुमार्ग से हटाने का यत्न करते तो कदाचित् महाभारत युद्ध न होता और 18 अक्षौहिणी सेना नष्ट न होती। उतनी महिलायें विधवा तथा उनके बाल-बच्चे अनाथ न होते एवं युद्धोपरांत कुछ काल पश्चात् जो दुराचार व अनाचार देश में फैला वह न फैलता।

इसी प्रसंग में दुर्योधन की कुटिल मृदुभाषिता का भी एक उदाहरण- लोलुप और चाटुकारिताप्रिय मद्रनरेश शल्य जो नकुल और सहदेव का सगा मामा था, दुर्योधन की नम्रता और सद्व्यवहार पर मुग्ध होकर उसकी ओर से युद्ध करने के लिए उद्यत हो गया था। दुर्योधन के उस अभिनय को लोलुप शल्य समझ नहीं पाया था। पाण्डवों का सगा मामा विरोधी पक्ष में हो जाय यह मीठी वाणी और सद् व्यवहार का ही तो चमत्कार था।

मृदुवाणी और कटु एवं व्यंग्यात्मक वाणी के प्रभाव एवं दुष्प्रभाव के महाभारत युद्ध के उपरिवर्णित प्रसंग मनुष्य की आंखें खोलते हुए इस लक्ष्य की ओर संकेत करते हैं कि मृदुवाणी ही सफल एवं स्वच्छ जीवन का सार है।

महाभारत के ही एक अन्य प्रसंग में महात्मा विदुर ने वाणी के विषय में एक सुन्दर उदाहरण देते हुए कहा है- वाणों से वींधा हुआ घाव भर जाता है, कुल्हाड़ी से काटा गया वृक्ष अथवा वन पुनः हराभरा हो जाता है, किन्तु कटुवाणी द्वारा वींधे गये व्यक्ति का घाव कभी नहीं भरता।

कागा किससे लेत है, कोयल किसको देत।
मीठी वाणी बोल के, जग अपना करि लेत।

सावन का गीत

झूमें तन-मन सारा --

❑सतीश कुमार नारनौंद

काले मेघा चले गगन में, अद्भुत होत नजारा।
ठंडी पवन चले मतवाली, झूमें तन-मन सारा।

कूक पड़ी कोकिल वन में, बैठ तरु की डाली।
कल-कल चली सरिता का राग गूंजता प्यारा।

वन तरुवर की डाली, निकली अंबर छूने को।
यौवन हंसता उसका पीकर प्रेम-नीर की धारा।

अवनी ऊपर हरितिमा की लहर उठती प्यारी।
प्रकृति भी लगी नाचने, ले क्षितिज का किनारा।

दो दिन का जीवन बंदे, फिर रुखसत है सबकी।
मानवता के रखवाले तुम, बनो सभी का सहारा।।

शोध आलेख

मुंशी प्रेमचंद के साहित्य पर आर्य समाज का प्रभाव

❑**डॉक्टर नरेश सिहाग एडवोकेट**, 26, पटेल नगर, भिवानी हरियाणा

भूमिका

हिंदी साहित्य के इतिहास में मुंशी प्रेमचंद एक ऐसे लेखक के रूप में प्रतिष्ठित हैं, जिन्होंने सामाजिक यथार्थ को कथा साहित्य के माध्यम से प्रस्तुत कर जनमानस को न केवल झकझोरा, बल्कि समाज सुधार की दिशा भी सुझाई। प्रेमचंद के लेखन में यथार्थवाद, नैतिक मूल्यों, समानता, सामाजिक न्याय और धार्मिक सुधार जैसे तत्व स्पष्ट रूप से परिलक्षित होते हैं। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि उनके साहित्य पर आर्य समाज के सिद्धांतों और विचारधारा का गहरा प्रभाव पड़ा। आर्य समाज, जो कि 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में स्वामी दयानंद सरस्वती द्वारा स्थापित एक सामाजिक और धार्मिक सुधार आंदोलन था, ने भारतीय समाज में व्याप्त रूढ़ियों, अंधविश्वासों और सामाजिक विषमताओं के विरुद्ध जन-जागरण का कार्य किया।

प्रेमचंद का साहित्य उसी कालखंड में विकसित हुआ जब आर्य समाज का प्रभाव पूरे भारत में फैल रहा था। इस लेख में हम प्रेमचंद के कथा साहित्य में आर्य समाज के प्रभाव की पड़ताल करेंगे, जिससे यह स्पष्ट होगा कि किस प्रकार प्रेमचंद ने आर्य समाज के विचारों को साहित्यिक अभिव्यक्ति प्रदान की।

आर्य समाज की मूल विचारधारा

आर्यसमाज का मूल उद्देश्य वेदों के शुद्ध और तर्कसंगत रूप को जनमानस तक पहुंचाना है। इसके प्रमुख सिद्धांतों में शामिल थे-

1. ईश्वर की एकता और निराकार रूप में विश्वास
2. वेदों की सर्वोच्चता
3. मूर्तिपूजा, अंधविश्वास, जातिप्रथा, बाल विवाह, सती प्रथा, पर्दा प्रथा और बहुपत्नी प्रथा के विरोध में अभियान
4. स्त्री शिक्षा और विधवा पुनर्विवाह का समर्थन
5. सामाजिक समानता और शुद्ध आचरण पर बल

स्वामी दयानंद का 'सत्यार्थ प्रकाश' इस आंदोलन की आधारशिला रहा, जिसने एक समतामूलक, न्यायपूर्ण और वैज्ञानिक समाज की कल्पना प्रस्तुत की।

प्रेमचंद की विचारधारा और आर्यसमाज

प्रेमचंद के साहित्य में नैतिकता, सामाजिक सुधार, जाति-प्रथा का विरोध, स्त्री स्वतंत्रता, शिक्षा का महत्त्व और धार्मिक पाखंडों के विरुद्ध स्वर बार-बार सुनाई देते हैं। ये सभी विषय आर्य समाज की विचारधारा से मिलते-जुलते हैं। प्रेमचंद का लेखन केवल मनोरंजन नहीं, अपितु जन-जागरण का माध्यम भी था। उनकी कहानियाँ और उपन्यास समाज में बदलाव लाने की आकांक्षा से ओतप्रोत हैं।

1. जातिवाद और सामाजिक भेदभाव का विरोध

आर्य समाज ने जातिवाद को वेदविरुद्ध मानते हुए इसका जोरदार खंडन किया। प्रेमचंद के साहित्य में भी यही स्वर मुखर होता है। उनकी प्रसिद्ध कहानी 'सद्गति' में एक अछूत दु:खी को तथाकथित ब्राह्मण द्वारा अपमानित किया जाना और अंतत: उसकी मृत्यु- यह कहानी न केवल जातिवाद की वीभत्सता पर प्रहार करती है, बल्कि सामाजिक अन्याय की कठोर निंदा भी करती है।

इसी तरह, उपन्यास 'रंगभूमि' का पात्र सूरदास अंधा होते हुए भी नैतिक दृष्टि से प्रखर है और वह समाज की विषमताओं से संघर्ष करता है। यह चरित्र एक ऐसे नैतिक समाज की कल्पना करता है, जो व्यक्ति की जाति या शारीरिक अक्षमता के आधार पर भेदभाव न करे- जो कि आर्य समाज के 'सर्वे भवन्तु सुखिन:' के आदर्श से मेल खाता है।

2. नारी स्वतंत्रता और विधवा पुनर्विवाह

आर्य समाज ने स्त्री शिक्षा, विधवा पुनर्विवाह और स्त्री सम्मान की स्थापना को अपने अभियान का हिस्सा बनाया। प्रेमचंद के साहित्य में स्त्री पात्र केवल शोभा की वस्तु नहीं, बल्कि विचारशील, संघर्षशील और निर्णायक

डॉ. नरेश सिहाग
एडवाकेट
(9466532152)

सम्पादक
बोहल शोध मञ्जूषा
भिवानी

रूप में चित्रित हैं।

'निर्मला' उपन्यास में बाल विवाह की त्रासदी और विधवा स्त्री की पीड़ा को मार्मिकता से दर्शाया गया है। यह उपन्यास स्त्री जीवन में स्वायत्तता की आवश्यकता को उजागर करता है। वहीं 'सेवासदन' में एक वेश्या सुधा का आत्मशुद्धि की ओर उन्मुख होना, स्त्री सम्मान की पुनः स्थापना का प्रतीक बनता है। प्रेमचंद द्वारा प्रस्तुत स्त्री पात्र अपने जीवन के निर्णय स्वयं लेने लगती हैं- यह आर्य समाज की प्रगतिशील दृष्टि की साहित्यिक परिणति है।

3. धार्मिक पाखंड का विरोध

आर्य समाज ने अंधविश्वास, पाखंड पर करारा प्रहार किया। प्रेमचंद की कहानियाँ जैसे 'पंच परमेश्वर', 'पूस की रात', 'ठाकुर का कुआं', 'बड़े घर की बेटी' आदि में धार्मिक और सामाजिक आडंबरों की पोल खोली गई है। विशेषतः 'ठाकुर का कुआं' में अछूत जाति की नायिका गंगी को अपने बीमार पति के लिए पानी लाने हेतु ठाकुर के कुएं से चोरी से पानी निकालना पड़ता है- यह उस तथाकथित धार्मिकता का पर्दाफाश करता है जो मानवता को नहीं पहचानती।

4. शोषण और सामंतवाद के विरुद्ध स्वर

आर्य समाज ने 'धर्म' की शुद्धि के साथ-साथ आर्थिक और सामाजिक शोषण के विरुद्ध भी कार्य किया। प्रेमचंद के उपन्यास 'गोदान' में होरी जैसे किसान का जीवन ग्रामीण भारत की शोषणकारी व्यवस्था का आईना है। वह अपने पूरे जीवन में केवल त्याग करता है, परंतु अंत में उसका 'गोदान' ही उसकी मुक्ति बनता है।

प्रेमचंद ने सामंती सोच, ऊँच नीच की व्यवस्था और धन के आधार पर बने वर्गभेद का जिस प्रकार विरोध किया है, वह आर्य समाज के सामाजिक न्याय के लक्ष्य से मेल खाता है।

भाषा और शैली पर प्रभाव

आर्य समाज ने संस्कृतनिष्ठ, सरल और शुद्ध हिंदी के प्रचार पर जोर दिया। प्रेमचंद ने उर्दू-हिंदी के मिश्रण से शुरू करके धीरे-धीरे खड़ी बोली हिंदी को अपनाया और इसे जन-सुलभ बनाया। उनकी भाषा में संस्कार, नैतिकता और सत्य का आग्रह स्पष्ट दिखाई देता है। यह आग्रह आर्य समाज की भाषिक नीति से प्रभावित प्रतीत होता है।

शिक्षा और जागरूकता की भावना

आर्य समाज ने शिक्षा को सामाजिक उन्नति का साधन माना। प्रेमचंद भी शिक्षा को सामाजिक परिवर्तन का आधार मानते हैं। 'शिक्षा' विषय पर उनकी कहानियाँ 'विद्या का रहस्य', 'गबन', 'ईदगाह' में यह दृष्टिकोण उजागर होता है। उनके पात्र शिक्षित होते हुए भी नैतिक और समाजोपयोगी बनें, इसका संकेत मिलता है।

मानवतावादी दृष्टिकोण

आर्य समाज का सबसे बड़ा योगदान भारतीय समाज में मानवतावाद की भावना को पुष्ट करना था। प्रेमचंद के पात्र- चाहे वह अछूत हो, किसान हो, स्त्री हो, मजदूर हो या व्यापारी- सभी में मानवता की पीड़ा और करुणा का बोध है। उनका साहित्य वर्ग, जाति और मत-मजहबों की संकीर्णताओं से ऊपर उठकर 'मनुष्य' को केंद्र में रखता है। यही आर्य समाज का मूल मंत्र था- 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' अर्थात् संपूर्ण विश्व को श्रेष्ठ बनाना।

सीधे प्रभाव : प्रेमचंद और आर्यसमाज के संपर्क

प्रेमचंद का जीवनकाल (1880-1936) और आर्य समाज का उदय (1875) लगभग एक ही युग में हुआ। बनारस और उत्तर प्रदेश आर्य समाज की गतिविधियों के केंद्र थे। प्रेमचंद स्वयं बनारस के रहने वाले थे और वहाँ की बौद्धिक तथा सामाजिक गतिविधियों से प्रभावित थे। प्रेमचंद की सोच में धर्म की पुनर्व्याख्या, मानवता का आग्रह और सामाजिक सुधार की ललक उस वातावरण की देन थी, जिसमें आर्य समाज सक्रिय था।

निष्कर्ष

मुंशी प्रेमचंद का साहित्य सामाजिक चेतना, सुधारवादी दृष्टिकोण और नैतिक मूल्यों से परिपूर्ण है। यह साहित्य केवल मनोरंजन नहीं, अपितु समाज को दिशा देने का एक साधन था। प्रेमचंद ने जिन विषयों को अपनी कहानियों और उपन्यासों में उठाया- वेद आधारित जीवन

मूल्य, जातिगत समानता, स्त्री शिक्षा, धार्मिक सुधार, शिक्षा का महत्त्व और शोषण के विरुद्ध आवाज़- वे सभी आर्य समाज की मूल विचारधारा से जुड़े हैं।

हालांकि प्रेमचंद ने कभी स्वयं को आर्य समाजी नहीं कहा, लेकिन उनके लेखन में आर्यसमाज की छाया स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। वे स्वामी दयानंद के विचारों से भलीभांति परिचित थे और उनकी सुधारवादी चेतना को साहित्य में साकार करने का कार्य उन्होंने किया।

अत: यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि मुंशी प्रेमचंद का साहित्य आर्य समाज की विचारधारा से अनुप्राणित था। उनके साहित्य ने आर्य समाज के उद्देश्यों को जन-सामान्य तक पहुँचाने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। वे न केवल युगद्रष्टा थे, बल्कि युग निर्माता भी थे।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. सत्यार्थ प्रकाश : स्वामी दयानंद सरस्वती
2. मुंशी प्रेमचंद : जीवन और साहित्य : अमृत राय
3. प्रेमचंद की सामाजिक चेतना : रामविलास शर्मा
4. आर्यसमाज और सामाजिक नवजागरण : श्यामसुंदर दास
5. प्रेमचंद के उपन्यासों में सामाजिक यथार्थ - नामवर सिंह
6. हिंदी साहित्य का इतिहास : डॉ. रामचंद्र शुक्ल
7. प्रेमचंद : एक आलोचनात्मक अध्ययन : आचार्य नंददुलारे वाजपेयी
8. भारत में आर्य समाज आंदोलन : के.सी. यादव
9. शांतिधर्मी मासिक जींद हरियाणा
10. बोहल शोध मंजूषा भिवानी हरियाणा

मनुस्मृति में मांसभक्षण निषेध

संकलन : डॉ. अमनदीप सिंह

1. योऽहिंसकानि भूतानि हिनस्त्यात्मसुखेच्छया।
स जीवंश्च मृतश्चैव न क्वचित्सुखमेधते।।-(मनु. 5/45)

अर्थ : जो जीव वध-योग्य नहीं हैं, उनको जो कोई अपने सुख के निमित्त मारता है, वह जीवित दशा में भी मृतक-तुल्य है, वह कहीं भी सुख नहीं पाता है।

2.यो बन्धनवधक्लेशान्प्राणिनां न चिकीर्षति।
स सर्वस्य हितप्रेप्सुः सुखमत्यन्तमश्नुते।।-(मनु. 5/46)

अर्थ : जो मनुष्य किसी जीव को बन्धन में रखने, वध करने व क्लेश देने की इच्छा नहीं रखता है, वह सबका हितेच्छु है, अतएव वह अनन्त सुख भोगता है।

3. नाऽकृत्वा प्राणिनां हिंसां मांसमुत्पद्यते क्वचित्।
न च प्राणिवधः स्वर्ग्यस्तस्मान्मांसं विवर्जयेत्।।-(5/48)

अर्थ : जीवों की हिंसा बिना मांस की प्राप्ति नहीं होती और जीवों की हिंसा स्वर्ग-प्राप्ति (सुखविशेष) में बाधक है, अत: मांस-भक्षण कदापि नहीं करना चाहिए।

4. समुत्पत्तिं तु मांसस्य वधबन्धौ च देहिनाम्।
प्रसमीक्ष्य निवर्तेत सर्वमांसस्य भक्षणात्।।-(मनु. 5/49)

अर्थ : मांस की उत्पत्ति, जीवों का बन्धन तथा उनकी हिंसा- इन बातों को देखकर सब प्रकार से मांस-भक्षण का त्याग करना चाहिए।

5. न भक्षयति यो मांसं विधिं हित्वा पिशाचवत्।
स लोके प्रियतां याति व्याधिभिश्च न पीड्यते।।-(5/50)

अर्थ-जो मनुष्य विधि त्यागकर पिशाच की तरह मांस-भक्षण नहीं करता वह संसार में सर्वप्रिय बन जाता है और विपत्ति के समय कष्ट नहीं पाता।

6. अनुमन्ता विशंसिता निहन्ता क्रयविक्रयी।
संस्कर्ता चोपहर्ता च खादकश्चैति घातकाः।।-(मनु. 5/51)

अर्थ : हत्या की अनुमति देने वाला, शस्त्र से मांस काटने वाला, मारने वाला, खरीदने वाला, बेचने वाला, पकाने वाला, परोसने वाला और खाने वाला, ये सब घातक हैं।

7. वर्षे वर्षेऽश्वमेधेन यो यजेत शतं समाः।
मांसानि च न खादेद्यस्तयोः पुण्यफलं समम्।।-(5/53)

अर्थ-जो मनुष्य सौ वर्ष-पर्यन्त प्रत्येक वर्ष एक बार अश्वमेध यज्ञ करता है तथा अन्य पुरुष जो मांसभक्षी नहीं है, इन दोनों के पुण्य का फल समान है।

8. फलमूलाशनैर्मेध्यैर्मुन्यन्नानां च भोजनैः।
न तत्फलमवाप्नोति यन्मांसपरिवर्जनात्।।-(मनु. 5/54)

अर्थ- मनुष्य को सेब, केला आदि पवित्र फल, गाजर, मूली आदि कन्दमूल और मुनि-अन्न के खाने से वह फल प्राप्त नहीं होता, जो मांस-भक्षण के परित्याग से प्राप्त होता है।

उपर्युक्त श्लोकों से यह ज्ञात होता है कि मनु महाराज मांस-भक्षण के प्रबल विरोधी थे।

कारगिल के बलिदानी

कैप्टन मनोज पाण्डेय
(परमवीर चक्र)

❏गौरीशंकर वैश्य विनम्र

सन् 1999 के कारगिल युद्ध में अनेक वीर सेनानियों ने अपने पराक्रम से शत्रुओं की कुटिल चालों को ध्वस्त करके विजयश्री प्राप्त की थी। इस युद्ध में महान वीर योद्धा कैप्टन मनोज पाण्डेय वीरगति को प्राप्त हो गए थे। उन्हें मरणोपरांत वीरता का सर्वोच्च पदक 'परमवीर चक्र' प्रदान किया गया था। बलिदानी कैप्टन मनोज पाण्डेय 3 जुलाई, 1999 को सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण खालूबार पोस्ट को दुश्मनों से मुक्त कराते हुए बलिदान हो गए थे।

कैप्टन मनोज पाण्डेय का जन्म 25 जून, 1975 को सीतापुर जनपद में नैमिष की पावन भूमि ग्राम रूढ़ा में गोपीचंद पाण्डेय और मोहिनी पाण्डेय के घर हुआ था। तब उत्तर प्रदेश सैनिक स्कूल (वर्तमान कैप्टन मनोज पाण्डेय यू पी सैनिक स्कूल) और फिर रानी लक्ष्मी बाई मेमोरियल स्कूल लखनऊ से शिक्षा प्राप्त की थी।

तत्पश्चात् उनका चयन एनडीए में हो गया। कैप्टन मनोज पाण्डेय को 6 जून, 1997 को 1/11 गोरखा राइफल्स में कमीशन प्रदान किया गया। उनकी पहली ही नियुक्ति आतंक प्रभावित क्षेत्र जम्मू के नौशेरां में हुई थी, जबकि दूसरी नियुक्ति सियाचिन में 18 हजार फीट की ऊँचाई पर की गई।

वहाँ डेढ़ वर्ष की नियुक्ति के बाद उनकी पलटन को पुणे जाने का आदेश दिया गया। पलटन को पूरी रसद और हथियार पुणे भेजे जा चुके थे। उनकी पलटन भी वापस हो रही थी कि अचानक बताया गया कि कारगिल में दुश्मन ने घुसपैठ कर ली है। कैप्टन मनोज पाण्डेय को उनकी कंपनी के साथ कारगिल के बटालिक सेक्टर खालूबार की हिमाच्छादित ऊँची चोटी को दुश्मनों के कब्जे से मुक्त कराने का आदेश मिला।

कैप्टन मनोज पाण्डेय 3 जुलाई, 1999 को खालूबार में ऊँची चोटी पर दुश्मन देश पाकिस्तान की सैनिक टुकड़ी के कब्जे से बंकर को मुक्त कराते हुए आगे बढ़े। उन्होंने तीन बंकरों को ध्वस्त कर दिया और चौथे बंकर पर कब्जा करने के लिए आगे की ओर बढ़े ही थे कि दुश्मन की गोली उनको लगी। अंतिम सांस लेने तक उन्होंने दुश्मन की सैनिक टुकड़ी का चौथा बंकर भी दुश्मन से मुक्त करा लिया। टुकड़ी को तहस-नहस करके भारतमाता के चरणों में हँसते- हँसते आत्मोत्सर्ग कर दिया। उनको वीरता का सर्वोच्च पदक परमवीर चक्र (मरणोपरांत) मिला।

लखनऊ में छावनी स्थित कैप्टन मनोज पाण्डेय नाम से एक चौराहा है, जहाँ उनकी प्रतिमा स्थापित की गई है। वीर बलिदानी की प्रतिमा पर जन्म जयंती तथा पुण्य तिथि पर उनके सम्मान में पुष्पांजलि अर्पित की जाती है। कैप्टन मनोज पाण्डेय सदैव अमर रहेंगे और प्रेरणास्रोत के रूप में चिरस्मरणीय रहेंगे। देश के सच्चे सपूत वीर सेनानी को शतशः नमन।

।। ऐसा ऋषि आया ।।

सत्यार्थ प्रकाश उपहार में देकर, पूर्वजों का उपकार जताया।
बहुत लिखा, बहु भांति कहा, हर तरह चेताया।
हम करते रहे अनसुना, हमें कुछ समझ न आया।
उन्हें हर तरह सताया।। ऐसा ऋषि आया ।
आंखों कानों को मूंद, धुंध में ठोकर खाई,
सूझा न सन्मार्ग, सच्चाई देख न पाया, बुद्धि चकराई।
पोपों ने छकाया, गप्पों को सुनाया, चहुँ ओर थी खाई,
धन संपदा अपार ,लूटा कर बनते रहे असहाय
बनाकर हमको ही झुनझुना, धूर्त अपनों ने बजाया
उसने हर तरह बचाया।। ऐसा ऋषि आया।
तीर्थों मठ मंदिरों में जा जा, जिसने दुर्दशा निहारी,
देकर औषधि-पथ्य उपचार थी बिगड़ी दशा सुधारी।
सुन पूर्वजों का इतिहास बढ़ गई हिम्मत सारी,
सामर्थ्य हुआ दो गुना, गर्व से शीश उठाया।।
अपने आत्म बल को बढ़ाया।। ऐसा ऋषि आया।
गौतम, कपिल, कणाद, आर्यभट्ट के चरणों में हर्षित
पाकर वेदों का सद्ज्ञान हुआ संसार चमत्कृत।
भारत फिर बना महान्, जगदगुरु का पाकर के सम्मान,
हुआ हर विधि उपकृत।
श्रुति सम्मत तथ्य सुन-सुना, आर्यों ने फिर परचम लहराया
वसुधा को स्वर्ग बनाया।। ऐसा ऋषि आया।

❏सत्यदेव प्रसाद आर्य मरूत
आर्य समाज मन्दिर नेमदारगंज (नवादा-बिहार)

कब्ज के मुख्य कारण

❑आयुर्वेद शिरोमणि डॉक्टर मनोहरदास अग्रावत, एनडी प्राकृतिक चिकित्सक

1-हाजत रोकना

पाखाने के हाजत की तुलना घड़ी की सुबह जगाने वाली घंटी (अलार्म) से की जा सकती है जो थोड़ी ही देर बोलती है। यह विवेक ध्वनि की भाँति है, जिस पर अमल न करने पर उसका सुनाई देना बंद हो जाता है। हाजत से शौच और बिना हाजत के शौच में बड़ा अंतर है। हाजत से शौच जाने पर पेट बहुत शीघ्र और अच्छी तरह से साफ हो जाता है। शौच का समय निश्चित करके ठीक उसी समय जाते रहने से और मन से मलाशय पर जोर डालने से कुछ दिनों बाद हाजत होने लगती है।

2-भोजन की अनियमितता

भोजन में अनियमितता रखकर शौच में नियमितता नहीं लायी जा सकती। कब्ज रहित लोगों का शौच क्रम बहुत कुछ भोजन क्रम से सम्बन्धित होता है। खाने का समय अस्त-व्यस्त हो जाने पर शौच में भी अनियमितता होना स्वाभाविक है। शौच के विचार में, भोजन पर विचार पहली शर्त होनी चाहिये। शौच का समय और परिमाण इस बात पर निर्भर है कि हमने भोजन कितनी बार किया, कब किया और कैसा किया और कितना किया।

अक्सर लोग शौच में नियमित होते हुए भी भोजन में नियमित नहीं होते। इस प्रकार कई-कई खुराकों का मल आंतों में पड़ा रहने के कारण भोजन में व्यतिक्रम करते रहने पर भी यद्यपि समय पर लोगों को शौच हो जाता है, पर है वह कब्ज की निशानी।

3-निद्रा में व्याघात

शौच की नियमितता का नींद से और सवेरे उठने के वक्त से भी कम सम्बन्ध नहीं है। यदि कोई कभी रात को कम सोये या देर-सवेर सोये तो शौच के क्रम में अवश्य अंतर पड़ जायेगा। सही समय से सोना, सही समय पर उठना और रात को सोने से कम से कम चार घंटे पहले रात का भोजन करना कब्ज निवारण की एक अत्यावश्यक विधि है।

4-शौच में जल्दबाजी

आमतौर पर शौच का काम कुछ पलों का ही होता है। कभी-कभी तो बड़ी आंतों का पूरा आधा हिस्सा उसी एक खिंचाव में खाली हो जाता है। लेकिन प्राय: पहली किश्त में सिर्फ अवग्रहाभ मलाशय का मल निकलता है और उसी समय अवरोही आंतों का मल आगे सरककर फिर अवग्रहाभ आँतों को भरता है और पाखाने की दूसरी किश्त आती है।

ऐसे लोगों की तादाद बहुत बड़ी है जिनकी बड़ी आँतों का अवग्रहाभ गलत भोजन और हाजत रोकने के अत्याचार के फलस्वरूप मैले का हौज बन जाता है और प्राय: इतना अधिक फैल जाता है और एक हिस्सा दूसरे के ऊपर इस तरह चढ़ जाता है कि पूरी सफाई के लिए दोहरी और तिहरी कोशिश की जरूरत होती है। अत: ऐसे लोगों को शौच में 5 से 15 मिनट तक लग जाते हैं। जल्दबाजी करने के परिणाम स्वरूप उल्टा खिंचाव होने लगता है और शौच एकदम रुक जाता है।

5-शौच का टालना और मल का बंधा होना

लोगों में भी एक गलत ख्याल यह है कि शौच के संबंध में लापरवाही करने या उसे टालने से कोई खास नुकसान नहीं है। बहुत से लोग शौच जाने का काम अपने दूसरे कामों की सुविधा के अनुसार रखना चाहते हैं।

दूसरा आम गलत ख्याल है कि मल को खूब बंधा होना चाहिये। पूरी तरह बंधे हुए मल के मानी हैं- कब्ज। जब खुराक का फुजला ठीक वक्त से निकलता है तो पाखाना नरम पुल्टिस की तरह होना चाहिये।

6-पानी की कमी

कम पानी पीना कब्ज पैदा करता है क्योंकि शरीर में पानी की कमी होने पर आँतें खुराक में से अधिक मात्रा में पानी खींच लेती हैं। रक्त में पानी की कमी रहने से शरीर में तरल रस जितनी मात्रा में चाहिये, नहीं निकल पाता है। इससे मल खुश्क होकर कब्ज हो जाता है। शरीर को कम से कम 24 घंटे में 3 लीटर पानी चाहिये। दिन-रात में पसीने और पेशाब के रूप में इतना पानी निकल जाता है। ज्यादा पसीना आने वालों को तो और अधिक पानी पीना चाहिये।

प्यास लगे व्यक्ति को पानी पीना न भूलना चाहिये किन्तु भोजन के समय कम से कम पानी पीना अच्छा है।

भोजन के समय अधिक पानी पीने से पाचक रसों की तेजी कम हो जाती है।

अगर तुझको रहती कब्जी है
तो पीने को पानी व खाने को सब्जी है।

7-पाखाने की गंदगी

पाखाने की असुविधा और गंदगी भी कब्ज के कारणों में एक है। गांधी जी कहते थे कि पाखाने का स्थान इतना साफहोना चाहिए जितना कि चौका। इसका तात्पर्य यह है कि खाते समय मन प्रसन्न रखने के लिए जैसा साफ स्थान जरूरी है उतना ही साफस्थान मानसिक प्रसन्नता के लिए शौच के समय जरूरी है।

8-मानसिक चिन्ता

हमारे कोठे पर भी मन का बहुत असर पड़ता है। यदि व्यक्ति चिंतित मन लेकर पाखाने जाता है तो शौच साफ नहीं होता। चिंताग्रस्त व्यक्ति को अच्छी हाजत कभी नहीं होती। कुछ लोग पाखाने में ही सारी चिंताएं करते हैं, शौच भूल जाते हैं। ऐसे लोग भी कब्ज के शिकार होते हैं।

9-नशा : सभी नशे कब्ज पैदा करने वाले होते हैं।

10-भूख से अधिक खाना

हमारे शरीर को जितनी आवश्यकता हो, उतना ही खाना चाहिए। यह विचार कि ज्यादा खाना ज्यादा फायदा करता है, गलत है। कहावत है- 'खाएं जितनी भूख, सोएं जितनी नींद।'

11-बिना भूख खाना

बिना भूख के खाना छोटी और बड़ी दोनों ही आँतों के लिए हानिकारक है। भूख न लगने का अर्थ है आंतों पर पहले से बोझ का लदा होना।

12-कम खाना : शरीर की जरूरत से कम खाना भी कब्ज कारक है।

13-बिना खुज्जेवाली खुराक

सभ्य कहिये या बड़े आदमी बनने के फेर में लोग आजकल खाने वाली वस्तुओं का ऊपरी भाग निकालकर जो खाया जा सकने वाला है, हटा देते हैं। जिसमें बड़े लाभ छिपे होते हैं। छिलका आदि बड़े गुणकारी होते हैं।

14-बिना चबाये खाना

बिना चबाया भोजन ठीक से पच नहीं पाता और इस प्रकार कब्ज का जनक होता है।

15-गलत खाना

बिना भूख स्वाद के कारण अधिक मीठे पदार्थ खाना और अधिक खा लेना, तले हुए पदार्थ खाना, अच्छी तरह चबाये बिना खाना ये सब कब्ज के कारण हैं।

लगातार कब्ज नाशक चूर्ण फांकते रहना, कब्ज बढ़ाने का ही काम करता है।

उम्मेदपुरा, पो. तारापुर (जावद)-458330

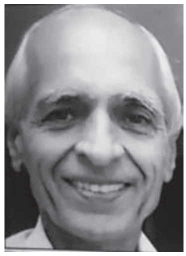

चार दिन की जिन्दगी थी

❑**प्रोफेसर शाम लाल कौशल** (9416359045)

चार दिन की जिंदगी थी
मैंने हंसने में ही नहीं
बल्कि रोने में बिता दी।

चार दिन की जिंदगी थी
मैंने प्यार करने में नहीं
नफरत करने में ही बिता दी।

चार दिन की जिंदगी थी
पुण्य तो कोई किया नहीं
पाप करने में ही बिता दी।

चार दिन की जिंदगी थी
प्रभु का भजन करने में नहीं
पैसा कमाने में ही गंवा दी।

चार दिन की जिंदगी थी
अपने को ठीक दिखाने
औरों को लांछन लगाने में बिता दी।

चार दिन की जिंदगी थी
असलियत छुपाता रहा
बनावट में ही बिता दी।

चार दिन की जिंदगी थी
भला तो कोई कर ना सका
बुराई करने में ही लगा दी।

भजनावली

रचनाकार : चौ. ईश्वर सिंह गहलोत

चौधरी ईश्वर सिंह गहलोत (1885-1958) काकरोला आर्यसमाज के प्रारम्भिक युग के दिग्गज भजनोपदेशक थे। इन्होंने विपुल भजन साहित्य लिखा। 'आदर्श भजन माला' का प्रथम भाग (495 पृष्ठ, हार्ड बाइंड) हमारे पास उपलब्ध है। मूल्य 200/- डाक खर्च अलग। प्राप्त करने के लिये सम्पर्क करें- 94162 53826

भजन

बता तू कैसा इन्सान लड़ने में खुशी मनावै। टेक।
पशु पक्षी गरीब बेचारे तनै लड़ा लड़ा कर मारे
वह हो रहे लहू लुहान तू देख देख हरषावै।।1
ईंट पत्थर कंकर कौड़ी तनै लड़ा लड़ा कर फोड़ी
बना इन्सान से शैतान मार मार कर शोर मचावै।2
यह तो रही दूर लड़ाई, अब घर में आग लगाई,
तू बना निपट नादान जीत हार की बाजी लगावै।3
निर्दयी नहीं शरमाया, तेज हाथ गंडासा उठाया,
ओ निरी निपट की कान भाई की नाड़ छुटावै।4
वो ईश्वर दीन दयाला, जिसने तू मनुष्य बना डाला,
तू तजकर दया की बाण महापापी नाम धरावै।।5
आ खुदी में मैं मैं रटता याद रख मैं का गला कटता
ईश्वर सिंह मैं का गुमान फिर तज कर तनै सुनावै।।6

भजन

टेक : दीखे तू ओ३म् हमारे, जिधर को देखें।
जिधर को देखें तू ही तू है, तुम से कोई नहीं न्यारे ॥1 ॥
तीन अक्षर तेरे नाम के अंदर, दीखें अजब नजारे ॥2 ॥
ब्रह्मा, विष्णु शिवजी तूं है, रचे पाले और मारे ॥3 ॥
तीन अक्षर त्रिशूल चलें जब, महाप्रलय अन्धकारे ॥4 ॥
जिधर को देखें तीन की रचना, तीन से कोई नहीं न्यारे ॥5 ॥
तीन के अंदर तीन समाये, जीव माया ब्रह्म चारे ॥6 ॥
नभमंडल जलमंडल थलमंडल, तीनों लोक पुकारे ॥7 ॥
तीन अवस्था तीन शरीर हैं, सिर धड़ पांव पसारे ॥8 ॥
अल्ला अकबर अजां यूं कहती, मस्जिद के तीन मीनारे ॥9 ॥
गिरजे के ऊपर बने हुए देखो, क्रास के तीन किनारे ॥10 ॥
तीन कांड वेद के तीन ही गुण हैं, सत रज तम न्यारे न्यारे
गूंगा भी जपले तेरे नाम को, दीन दुखियों के सहारे ॥12 ॥
जो ना ले वह भी ले नाम तेरा, भोजन करके डकौरे ॥13 ॥
सबमें रमे हुए सब से न्यारे, हिरण्य गर्भ धारे ॥14 ॥
तीन तार कहें यज्ञोपवीत के, हृदय में वास तुम्हारे ॥15 ॥
ईश्वरसिंह तेरी महिमा गावे, करो सब के निस्तारे ॥16

टेक : मेरा कहा मानकर, तू मात-पिता का मान कर।
एक से तू प्रीत कर, दो दुःख टार दे।
तीन ताप तप से जलाकर मार दे।
ज्ञान तीर तानकर, फिर सोइये चादर तान कर ॥1
चार चोर पीछे लगे, इनसे हुशियार रहे।
पांच पंथ झूठे फांसें, इनसे खबरदार रहे।
सुन इधर दो कान कर, सत्य की दुकान कर ॥2
छः छलिया छल करें, छल में न आना।
सत रंगी दुनियां का रंग न चढ़ाना।।
आदम देह में आनकर, तू रखा अपनी आन कर ॥3
आठ गांठ अष्ट धात पुष्ट करे सुख हो।
नो निध कारज सिद्ध प्रभु ओर मुख हो।
समरण समय दोनों कर, तू दीनों को दान कर ॥4
दस बस में दसमें दर शून्य शिखर जा।
अधर समाधि व्याधि दूर मल हट ज्या।
वहाँ जल पान कर, यहाँ खाया अमर पान कर।।5
शब्द एक अर्थ दो मूढ़ नहीं जानता।
ईश्वरसिंह की कविता को कवि ही पहचानता।
आज्ञा में रह मानकर तू शायरी रहमान कर।।6

बाल वाटिका

प्र. विजय कुमार जांगिड़

जानते हो!

भारत के प्रथम

राष्ट्रपति– डॉ. राजेन्द्र प्रसाद
उपराष्ट्रपति – डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन्
अंतरिक्ष यात्री – स्क्वाड्रन लीडर राकेश शर्मा
आई. सी. एस. – सत्येन्द्रनाथ टैगोर
नोबेल पुरस्कार विजेता– रवीन्द्र नाथ टैगोर
महिला प्रधानमंत्री – श्रीमती इन्दिरा गांधी
महिला राज्यपाल – श्रीमती सरोजनी नायडू (उ. प्र.)
महिला आई. पी. एस. – किरण बेदी
केन्द्रीय मंत्रीमण्डल में महिला मंत्री– राजकुमारी अमृतकौर
महिला मुख्यमंत्री– सुचेता कृपलानी (उ. प्र.)

☺😐☺हास्यम्☺😐☺

☺पिता–एक जमाने में गेहूँ की बोरी दस रूपये में आती थी।
बेटा– बोरी तो अब भी दस रूपये में आती है, बस उसमें गेहूँ नहीं होती।

रवीश (आदित्य से) क्या बात है! आज बड़े खुश नजर आ रहे हो!
आदित्य– आज मेरे पूरे सौ नम्बर आए हैं।
रवीश– कमाल है, यह कैसे हो गया?
आदित्य– 50 हिन्दी में, 30 गणित में और 20 अंग्रेजी में।

☺पिता– बेटा, तुम्हें कितनी बार समझाया है, यह सचमुच का शेर नहीं है, तस्वीर है, तुम डरते क्यों हो?
आशु– मैं डरता नहीं पिताजी, मुझे केवल यह चिन्ता हो रही है कि बेचारा भूखा होगा।

☺ माँ ने देखा कि बेटा दर्पण (शीशा) के सामने आँख बंद किए खड़ा है तो उसने पूछा– बेटा, यह क्या कर रहे हो?
बेटा– देख रहा हूँ कि मैं सोते समय कैसा लगता हूँ।

☺अध्यापक– बच्चो, जूते का क्या लाभ है?
आशु– सर, इसका सबसे बड़ा लाभ तो यह है कि जब हम इसे उतारते हैं तो बड़ा आराम मिलता है।

प्रहेलिकाः

–अनुव्रत आर्य

● सदा फूल फल छाया देते पर बदले में कुछ नहीं लेते
करते हैं कितने उपकार, उनका नाम बताओ यार।

● उठते हैं आने से पहले,
सोते हैं जाने के बाद।
गरमी में चिढ़ते हैं उससे,
सरदी में करते हैं याद।।

● दिन में दिखता हमें सफाचट
रातों में खिलते हैं फूल।
बादल घिरते पानी गिरता,
आंधी आती उड़ती धूल।।

● जिससे धरती प्यास बुझाती,
फसलें नव जीवन हैं पातीं,
हर प्राणी को उसकी चाह,
खेतीहर तकते हैं राह।।

पे ड़ सू र ज आ का श ब र सा त

विचार-वाटिका

❑प्रतिभा बहन

■आलसी इतनी धीमी गति से चलता है कि गरीबी और दुर्भाग्य उसे जल्दी ही पकड़ लेते हैं।

■आंसू बहाने से सहानुभूति मिलती है और पसीना बहाने से जीवन बदल जाता है।

■एक अच्छा स्वच्छ मन वाला व्यक्ति दूसरों की विशेषताएँ देखता है, दूषित मन वाला व्यक्ति दूसरों में बुराई ही ढूंढ़ता है।

■सबसे बड़ी हानि क्या है? इसका उत्तर भर्तृहरि जी ने दिया है– समय को व्यर्थ खोना। जीवन का एक क्षण भी करोड़ मुद्रा देने पर भी फिर नहीं मिलता, यदि वह व्यर्थ ही खो दिया तो इससे अधिक हानि हो भी क्या सकती है?

■यदि मनुष्य में काम करने की सच्ची लगन या धुन हो तो अवसर हर समय उसके सामने है।

प्रेरक प्रसंग

सोच का असर

प्रेषक : प्रतिष्ठा आर्या

किसी शहर में दो भाई रहते थे। उनमें से एक बड़ा बिजनेसमैन था तो दूसरा एक ड्रग-एडिक्ट था और वह अक्सर नशे की हालत में लोगों से मार-पीट किया करता था। लोग इनके बारे में जानते तो बहुत आश्चर्य करते कि आखिर दोनों में इतना अंतर क्यों है? जबकि दोनों एक ही माता-पिता की संतान हैं, एक जैसी शिक्षा प्राप्त की है और बिलकुल एक जैसे माहौल में पले-बढ़े हैं। कुछ लोगों ने इस बात का पता लगाने का निश्चय किया और शाम को भाइयों के घर पहुंचे। अन्दर घुसते ही उन्हें नशे में धुत एक व्यक्ति दिखा, वे उसके पास गए और पूछा,

'भाई तुम ऐसे क्यों हो? तुम अकारण लोगों से लड़ाई-झगडा करते हो, नशे में धुत अपने बीवी बच्चों को पीटते हो? आखिर ये सब करने की वजह क्या है?' 'मेरे पिता', उसने कुछ विचार कर उत्तर दिया। 'पिता!! वह कैसे?', लोगों ने पूछा। वह बोला, 'मेरे पिता शराबी थे, वे अक्सर मेरी माँ और हम दोनों भाइयों को पीटा करते थे। भला तुम लोग मुझसे और क्या उम्मीद कर सकते हो? मैं भी वैसा ही हूँ।'

फिर वे लोग दूसरे भाई के पास गए। वह अपने काम में व्यस्त था और थोड़ी देर बाद उनसे मिलने आया। 'माफ कीजियेगा, मुझे आने में थोड़ी देर हो गयी।' वह बोला, 'बताइए, मैं आपकी क्या मदद कर सकता हूँ?' लोगों ने इस भाई से भी वही प्रश्न किया।

'आप इतने सम्मानित बिजनेसमैन हैं, आपकी हर जगह पूछ है, सभी आपकी प्रशंसा करते हैं, आखिर आपकी इन उपलब्धियों की वजह क्या है?' 'मेरे पिता', उत्तर आया। लोगों ने आश्चर्य से पूछा, 'भला यह कैसे?' 'मेरे पिता शराबी थे, नशे में वे हमें मारा-पीटा करते थे। मैं यह सब चुप-चाप देखा करता था और तभी मैंने निश्चय कर लिया था कि मैं ऐसा बिलकुल नहीं बनना चाहता। मुझे तो एक सभ्य, सम्मानित और बड़ा आदमी बनना है, और मैं वही बना।' भाई ने अपनी बात पूरी की।

किसी भी घटना के दो पहलू होते हैं। हमेशा अपनी सोच को सकारात्मक रखने की कोशिश करें, जिससे आपके जीवन में सकारात्मक ऊर्जा का संचार होगा और आपको मुश्किलों से लड़ने की शक्ति भी प्राप्त होगी।

कविता

●सहदेव समर्पित

रंग-बिरंगी इस दुनिया
में एक स्नेह का रंग।
हर प्राणी को जीवन जीने
का सिखलाता ढंग।।

कटुता और कुटिलता के अब
दूर करें सब कांटे।
खुद भी मन में रखे हौंसला
सबको खुशियाँ बांटे।।

मन के मलिन विचारों को सब
प्रेम भाव से धो लें।
एक दूसरे को इस रंग में
आओ आज भिगो लें।।

इस दुनिया में सब रोगों की
है बस एक दवाई।
अपने जैसा औरों का दु:ख
समझें सारे भाई।।

मन का मैल मिटाकर सारे
सात्त्विकता अपनाओ।
अपना जीवन श्रेष्ठ बनाकर
जग को राह दिखाओ।

सर्वरक्षक परमात्मा ने सदा मेरी रक्षा की है

स्वामी दयानन्द उन दिनों फर्रुखाबाद में धर्मप्रचार कर रहे थे। एक दिन एक दुष्ट व्यक्ति ज्वालाप्रसाद नाम के एक शराबी और मांसाहारी ब्राह्मण को पालकी में बैठाकर स्वामीजी के पास ले गया। वह स्वामीजी के सामने बैठकर उनको दुर्वचन कहने लगा। उसके व्यवहार से दु:खी होकर वहाँ बैठे भक्तों ने उसे पीट दिया। स्वामीजी को यह बात अच्छी नहीं लगी। इस घटना का बदला लेने के लिए ज्वालाप्रसाद का एक संबंधी बहुत से लठैतों को लेकर आया पर स्वामीजी के दर्शन करते ही उसके विचार बदल गए। लाला जगन्नाथ ने स्वामीजी को सुरक्षित स्थान पर रहने की सलाह दी। इस पर दृढ़ ईश्वरविश्वासी स्वामीजी ने कहा- यहाँ तो आप मेरी रक्षा कर लेंगे परन्तु अन्यत्र कौन करेगा? मैंने आज तक अकेले भ्रमण किया है। आगे भी करूँगा। कई बार मेरे प्राण हरने की चेष्टा की गई है, परन्तु सर्वरक्षक परमात्मा ने सदा मेरी रक्षा की है, भविष्य में भी वही करेगा, आप चिन्ता न करें।

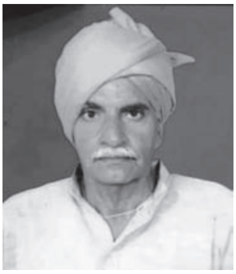

बिन्दु बिन्दु विचार

❐भलेराम आर्य, सांघी वाले (9416972879)

❍सकारात्मकता से बड़ा ऊर्जा का कोई और स्रोत नहीं।
❍आत्मविश्लेषण सुधार की दिशा में पहली सीढ़ी है।
❍मनुष्य में शक्ति की नहीं, संकल्प की कमी होती है।
❍संकल्प-पूर्ति के लिये निरन्तर प्रयास आवश्यक है।
❍नियमित समीक्षा ही सुधार के लिये आधार तैयार करती है।
❍मौन क्रोध की सर्वोत्तम औषधि है।
❍दया सबसे बड़ा धर्म है।
❍क्रोध लक्ष्मी और कीर्त्ति का नाश करता है।
❍आशा ही किसी उपक्रम को प्रोत्साहित करती है।
❍भाषा विचार का वस्त्र है।
❍अच्छे विचार ही बुद्धि की शुद्धि में सहायक हैं।
❍क्रियान्वयन के अभाव में अच्छी से अच्छी योजना भी व्यर्थ है।
❍बुरे विचार ही हमारे सुख शान्ति के शत्रु हैं।
❍परिवर्तन सकारात्मकता का संचार करता है।
❍परिवर्तन को स्वीकार न करना भविष्य से मुंह फेरने जैसा है।
❍अन्त: करण की शुद्धि से ही साधना संभव है।
❍पुरुषार्थ से अर्जित सम्पदा ही स्थायी होती है।

शत शत नमन करें वीरों को

❐सेवासिंह वर्मा पूठ खुर्द, नई दिल्ली

अमर शहीदों की समाधि पर, आओ सब मिल फूल चढ़ाएँ।
अमन चैन हो चहुं ओर, हम ऐसा भारत देश बनाएँ।।

याद रखेंगे वीरों की हम भारत मां पर कुर्बानी।
स्वर्णाक्षरों में लिखी जाएगी इनकी जांबाज कहानी।।
जिम्मेवारी हम सब को भी है अब अपनी निभानी।
मां बहनों परिवार जनों को ना हो कोई परेशानी।।
सब जन को हम गले लगाकर भारत मां का मान बढ़ाएँ।।
अमर शहीदों की समाधि पर, आओ सब मिल फूल चढ़ाएँ।

चाहे भीषण गरमी हो या हों बर्फीली रातें।
जल थल नभ में सजग प्रहरी अपना शौर्य दिखलाते।।
जब हो कठिन प्राकृतिक आपदा, सब की जान बचाते।
अदम्य साहस दिखलाकर, बिछड़ों को गले मिलाते।।
शत-शत नमन करें वीरों को हम सब अपना शीश झुकाएँ।।
अमर शहीदों की समाधि पर, आओ सब मिल फूल चढ़ाएँ।।

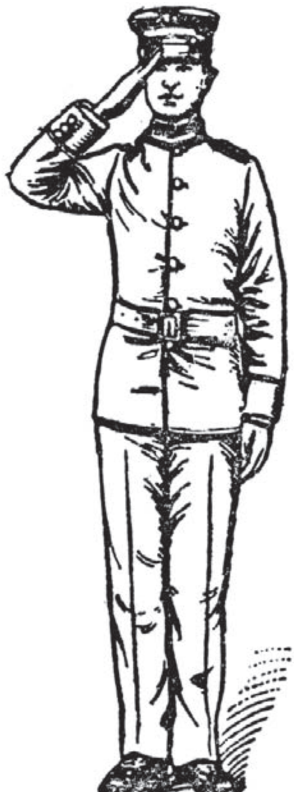

केन्द्रीय आर्य युवक के राष्ट्रीय अध्यक्ष डॉ. अनिल आर्य जी एवं पूर्व मजिस्ट्रेट श्री ओम सपरा जी ने महर्षि दयानंद सरस्वती आर्य समाज नांगलोई (नजदीक पानी की टंकी) की पूरी टीम को श्रावणी पर्व की किट देकर सम्मानित किया।

युवा आर्यसमाज अकालगढ़ के सदस्य हवन करते हुए। योगाचार्य बलराज व श्री भगतसिंह शास्त्री द्वारा युवाओं में यज्ञ के प्रति रूचि उत्पन्न करने के लिये समय समय पर यज्ञ किया जाता है। (निस)

नरवाना स्थित डी ए वी शताब्दी पब्लिक स्कूल में यज्ञ एवं प्रवचन कार्यक्रम सफलतापूर्वक संपन्न हुआ

विशेष आभार प्रिंसिपल श्री गजेन्द्र शर्मा जी का, जिन्होंने पूर्ण श्रद्धा एवं कुशल नेतृत्व से सहयोग दिया, धन्यवाद समस्त स्टाफ एवं भारत के भविष्य प्यारे बच्चों का जिन्होंने पूर्ण अनुशासन में रहकर सच्चे जिज्ञासु की भांति वेद के संदेश को सुना एवं समझा।

हृदय से सम्मान हमारे वेदपाठी श्री श्याम प्रकाश और परमजीत जी का जिन्होंने चतुर्वेदी शतक पाठ में मधुर वाणी से सहयोग किया, धन्यवाद श्री हीराराम आर्य प्रधान जी का एवं यशस्वी शिक्षाविद् डॉ. रणवीर कौशल जी का जिनकी उपस्थिति से हमारा उत्साह वर्धन हुआ।

अभयं नक्तमभयं दिवा नः सर्वा आशा मम् मित्रं भवन्तु। अथर्व 19.15.6

अर्थात् हे मानव, तुम इतना ज्ञानवान बनो कि अज्ञान रूपी अन्धकार तुझे भयभीत न कर सके। इतना सावधान एवं जागरूक बन कि अपने आपको ज्ञानी समझने वाले भी तुझे भ्रमित न कर सकें। पूर्ण आशावादी बनकर आत्मविश्वास से आगे बढ़, जिससे किसी भी तरह का भय तुझे न सतावे। अपने यथायोग्य व्यवहार व मधुर वाणी से चहुं ओर रस घोल जिससे कि हर दिशा में तुझे मित्र प्राप्त हों, कोई शत्रु न रहे।

मोहन लाल धर्माचार्य कुरुक्षेत्र 9215226574.

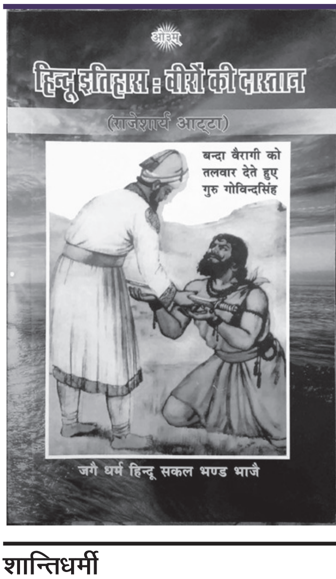

●क्या भारत का इतिहास केवल पराजयों का इतिहास है? ●पोरस विजयी हुआ था या सिकन्दर? ●हूणों को किसने हराया? ●क्या जाट गुज्जर विदेशी हैं? ●तैमूर को किसने हराया? ●गजनवी को किसने लूटा? ●क्या आर्य विदेशी हैं?

●विदेशी इतिहासकारों के मिथकों को खण्डित कर भारतीय परम्परा के वीरों के शौर्य की प्रामाणिक जानकारी देने वाली रोमांचक पुस्तक

●हिन्दू इतिहास वीरों की दास्तान

●लेखक : प्रसिद्ध इतिहासगवेषक **राजेशार्य आट्टा**

●प्रकाशक : रचना प्रकाशन पानीपत

पुस्तक शांतिधर्मी कार्यालय से प्राप्त की जा सकती है।

240 पृष्ठ, रजिस्टर्ड डाक खर्च सहित 125 रुपये मात्र।

अपना पता 9416253826 व्हाट्स एप्प पर प्रेषित करें।

पुस्तक प्राप्त करने के लिये 125 रुपये मात्र जमा करायें

वैदिक धर्म प्रचार के इच्छुक उपदेश प्रचारक तथा भजनोपदेशक आमंत्रित हैं

वैदिक विचारधारा के विस्तार और प्रचार हेतु एक व्यवस्थित प्रचार योजना बनाई जा रही है, जिसके अंतर्गत आर्य समाज और वैदिक विचारधारा के प्रति समर्पित व्यवहारकुशल और चरित्रवान व्यक्तियों के द्वारा पूरे देश में व्यापक स्तर पर प्रचार प्रसार करवाया जाएगा। इस हेतु निर्धारित चयन प्रक्रिया के अंतर्गत चयन किए गए उपदेशकों, प्रचारकों तथा भजनोपदेशों को यह जानकारी प्रदान की जाएगी कि एक निर्धारित योजना के अंतर्गत प्रचार प्रसार का कार्य किन-किन मुख्य विषयों को आधार बनाकर एकरूपता के साथ सभी स्थानों पर किया जाए। प्रचार के दौरान वितरित की जाने वाली प्रचार सामग्री तथा साहित्य की भी जानकारी दी जाएगी।

इस हेतु प्रारंभिक रूप से दस प्रचारकों का चयन किया जाएगा जो भारत के हिंदी भाषी राज्यों तथा गुजरात और महाराष्ट्र राज्यों में प्रचार करेंगे। चयनित महानुभावों को कम से कम 3 वर्ष संगठन के साथ कार्य करना होगा। सभी प्रचारकों को सम्मानजनक मानदेय और आवश्यक प्राथमिक सुविधाएं उपलब्ध कराई जाएँगीं।

स्वाध्यायशील, कुशल वक्ता, व्यवहार-कुशल तथा मिशनरी भावना वाले जिज्ञासु सागर आमंत्रित हैं। गुरुकुल शिक्षा प्राप्त शास्त्री एवं आचार्य तथा प्रचार प्रसार के कार्य में अनुभवी आवेदकों को प्राथमिकता दी जाएगी। कृपया शीघ्र ही फोटो सहित अपनी शैक्षिक योग्यता तथा अनुभव आदि का पूर्ण विवरण निम्नलिखित पते पर भेजें अथवा मेल करें।

आवेदन भेजने का पता
श्री प्रकाश जी आर्य, आर्य समाज मंदिर,
2795, पंडित राजगुरु शर्मा मार्ग इंदौर रोड महू-453441
मध्य प्रदेश मो. 9826655117

भवदीय
(सुरेश चंद्र आर्य)
प्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली

दु:खद समाचार

कालांवाली, मनोनीत पार्षद पूर्ण नागर जी की माताजी का निधन हो गया। उनका अंतिम संस्कार 28 जुलाई 2025 की सुबह 10 बजे रामबाग कालांवाली में किया गया।

शांतिधर्मी परिवार की ओर से माताजी को विनम्र श्रद्धाञ्जली अर्पित करते हैं।

शुभ सूचना

कन्या गुरुकुल दबथला (मेरठ) का वार्षिकोत्सव

सूचित किया जाता है कि आने वाली 24-26 अक्टूबर 2025 दिन को वैदिक कन्या गुरुकुल दबथला, मेरठ का 'सातवां वार्षिकोत्सव' बड़ी धूमधाम के साथ कन्या गुरुकुल भूमि पर मनाया जाएगा। आप सभी सपरिवार सादर आमंत्रित हैं। इस शुभ अवसर पर 'अथर्ववेद पारायण महायज्ञ, नव प्रविष्ट कन्याओं का उपनयन-वेदारम्भ संस्कार और नवनिर्मित यज्ञशाला' का लोकार्पण समारोह बड़ी धूमधाम से मनाया जाएगा। आप सभी से निवेदन है कि इन तिथियों को अपनी डायरी-कैलेंडर में अवश्य नोट कर लें और इन तिथियों में अपना कोई पारिवारिक, सामाजिक व अन्य दूसरा कोई कार्यक्रम न रख सपरिवार गुरुकुल में पधारें।

आचार्य प्रमोद कुमार, 7409768692
संचालक- वैदिक कन्या गुरुकुल दबथला, मेरठ

अंतर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन 2025 की तैयारियों हेतु बैठकों का दौर जारी

का स (ई मेल द्वारा)

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी की 200वीं जयंती व आर्यसमाज स्थापना के 150 वर्ष के ऐतिहासिक अवसर पर आयोजित होने वाले अंतर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन 2025 (30 अक्टूबर से 2 नवम्बर 2025, नई दिल्ली) की भव्य तैयारियों हेतु विभिन्न प्रान्तों की आर्य सभाओं, दिल्ली की प्रमुख आर्य समाजों एवं आर्य संगठनों के पदाधिकारियों एवं कर्मठ कार्यकर्ताओं की बृहद् सार्वजनिक बैठक रविवार, 27 जुलाई 2025 को आर्य सभागार, आर्य समाज, ग्रेटर कैलाश पार्ट-1, नई दिल्ली में आयोजित की गई।

इस बैठक में आगामी महासम्मेलन की योजनाओं, व्यवस्थाओं एवं जनसंपर्क रणनीतियों पर गहन चर्चा हुई। जिसमे मुख्य अतिथि के रूप में सुरेश चन्द्र आर्य जी, प्रधान, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, धर्मपाल आर्य जी, प्रधान, दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा एवं सुरेन्द्र कुमार आर्य जी, ज्ञान ज्योति महोत्सव आयोजन समिति के अध्यक्ष उपस्थित हुए। इस अवसर पर सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान सुरेश चन्द्र आर्य जी एवं सुरेन्द्र कुमार आर्य जी, ज्ञान ज्योति महोत्सव आयोजन समिति के अध्यक्ष ने अंतरराष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन पंजीकरण की वेबसाइट (www.aryamahasammelan.com) का उद्घाटन भी किया। का स (ई मेल द्वारा)

।।ओ३म्।।

स्वामी भीष्म जी महाराज के शिष्य उत्तर भारत के प्रसिद्ध भजनोपदेशक

स्व. पं. चन्द्रभान आर्य

की चुनी हुई रचनाओं का संकलन

(हरियाणा साहित्य अकादमी के सौजन्य से प्रकाशित)

भजन भास्कर

❖भक्ति ❖प्रेरणा ❖शौर्य ❖नारी, चार सर्गों में विभक्त

पृष्ठ : 98, मूल्य : ₹80 (अस्सी रुपये) केवल

पंजीकृत डाक से मंगवाने के लिए मूल्य अग्रिम भेजें।

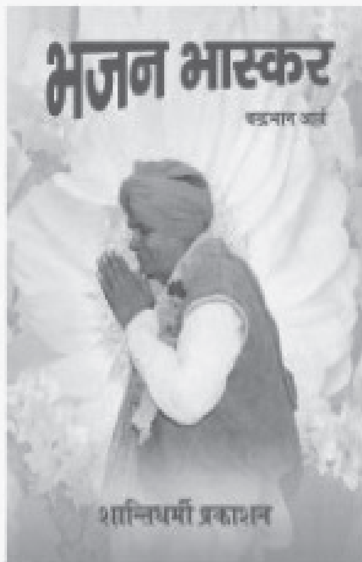

प्राप्ति स्थान

शांतिधर्मी प्रकाशन

756/3 आदर्श नगर सुभाष चौक जींद-126102 (हरयाणा)

दूरभाष : 9416253826, 9996338552

ओ३म्

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी की

200वीं जयंती

आर्यसमाज स्थापना के

150वें वर्ष

के अवसर पर

विश्व के इतिहास में अब तक का सबसे विशाल

सार्द्ध शताब्दी अंतर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन नई दिल्ली

अन्तर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन
30 अक्टूबर से 2 नवंबर 2025
दिल्ली
कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

30 अक्टूबर से 2 नवंबर 2025

तदनुसार कार्तिक शुक्ल 8, 9, 10, 11 विक्रमी 2082

तिथियां सुरक्षित कर लेवें एवं सबको सूचित करें।

- ज्ञान ज्योति महोत्सव आयोजन समिति
- सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा
- दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा

15, हनुमान रोड, नई दिल्ली - 110001

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक सहदेव द्वारा प्रियंका प्रिंटर्स, जींद के लिए आचार्य प्रिंटिंग प्रैस रोहतक से छपवाकर, कार्यालय शान्तिधर्मी ७५६/३, आदर्श नगर, सुभाष चौक (पटियाला चौक), जीन्द-१२६१०२ (हरि०) से प्रकाशित। सम्पादक : सहदेव

साहित्य समीक्षा

पंचमहायज्ञ और वैदिक आचरण में रुचि रखने वाले सुधीजनों के लिये संग्रहणीय

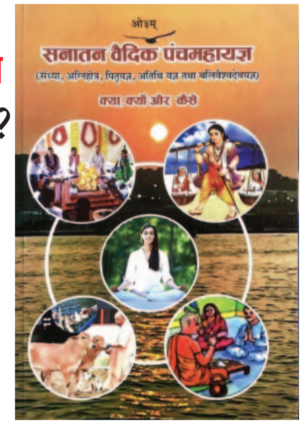

पुस्तक का नाम : सनातन वैदिक पंचमहायज्ञ – क्या, क्यों और कैसे ?

लेखक/संकलनकर्ता : श्री अशोक जी गौतम (जींद, हरियाणा)
+91 94160 60300, Email : aryaashokgautam@gmail.com

प्रकाशक : हितकारी प्रकाशन समिति, हिण्डौन सिटी, राजस्थान – 322230
ईमेल : aryaprabhakar@yahoo.com
संस्करण : प्रथम (जुलाई 2025) 2000 प्रतियाँ, पृष्ठ संख्या : 224, प्रकरण संख्या : 18
मूल्य : 235/–

आर्य समाज के प्रवर्तक महर्षि दयानंद सरस्वती जी ने अपने ग्रंथों में वैदिक कर्मकांड और विशेषत: पंचमहायज्ञों का विशद प्रतिपादन किया है। उन्होंने महर्षि मनु आदि प्राचीन ऋषियों के पदचिह्नों पर चलते हुए प्रत्येक व्यक्ति के लिए नित्यकर्म के रूप में ब्रह्मयज्ञ, देवयज्ञ, पितृयज्ञ, अतिथियज्ञ एवं बलिवैश्वदेवयज्ञ—इन पंचमहायज्ञों के नियमित अनुष्ठान का आग्रह किया है। आर्य समाज के कई प्रमुख विद्वानों ने समय-समय पर पंचमहायज्ञों के संबंध में ग्रंथों की रचना की है। इसी क्रम में एक नवीनतम कृति 'सनातन वैदिक पंचमहायज्ञ–क्या, क्यों और कैसे ?' प्राप्त हुई है, जिसका दक्षतापूर्वक संकलन एवं सुव्यवस्थित प्रस्तुतीकरण श्री अशोक जी गौतम द्वारा उनके गहन स्वाध्याय, अनुभव व चिंतन के आधार पर किया गया है।

लेखक ने सामग्री संकलन में आर्य समाज के प्रतिष्ठित लेखकों के एतद् विषयक ग्रंथों का सहारा लिया है और उनका आभार सूची सहित व्यक्त किया है। यह पुस्तक एक परिश्रमी संकलन का उत्कृष्ट उदाहरण है।

पुस्तक के प्रारंभ में स्वामी सच्चिदानंद जी (जयपुर) का 'शुभकामना संदेश' सम्मिलित है, जिसमें उन्होंने इस ग्रंथ को यज्ञों से जुड़ी जिज्ञासाओं का समाधान करनेवाला तथा सनातन वैदिक सिद्धांतों को युक्ति, तर्क और प्रमाणों सहित स्पष्ट करनेवाला बताया है।

'प्राक्कथन' में श्री गौतम जी ने स्पष्ट किया है कि संध्या और अग्निहोत्र की विधियों के लिए उन्होंने विशेष रूप से संस्कारविधि के 1883 ई. में प्रकाशित द्वितीय संस्करण को प्राथमिकता दी है, जिससे उनकी शास्त्रनिष्ठा और पाठ-प्रामाणिकता के प्रति प्रतिबद्धता स्पष्ट होती है।

पुस्तक के प्रारंभिक अध्यायों में वेद, वैदिक भाषा, वैदिक साहित्य तथा ईश्वर संबंधी सिद्धांतों को प्रश्नोत्तर शैली में प्रस्तुत किया गया है, जो आर्यसमाज के विचारों से पूर्णत: अनुरूप हैं। इसमें देशी-विदेशी अनेक विद्वानों के मन्तव्यों का भी समावेश किया गया है, जिससे यह पुस्तक शोध की दृष्टि से भी उपयोगी बन पड़ी है।

इस पुस्तक में प्राणायाम का महत्त्व और अग्निहोत्र के वैज्ञानिक पक्षों पर भी विशेष रूप से प्रकाश डाला गया है। आर्य समाज में प्रचलित बृहद् यज्ञ तथा विविध सामाजिक पद्धतियों का भी इसमें समावेश किया गया है। स्वस्तिवाचनम् और शांतिकरणम् के मंत्रों के सुस्पष्ट अर्थ भी प्रस्तुत किए गए हैं, जो अत्यंत उपयोगी सिद्ध होंगे।

यह कृति केवल धार्मिक अनुष्ठानों का परिचय ही नहीं कराती, बल्कि पाठकों को वैदिक जीवन-पद्धति की वैज्ञानिकता, तार्किकता और प्रासंगिकता से भी अवगत कराती है। इससे वैदिक संस्कृति के गूढ़ तत्त्वों का सहज ज्ञान प्राप्त होता है तथा जीवन को संयमित और समृद्ध बनाने की प्रेरणा मिलती है।

पुस्तक का गेटअप, मुद्रण, कागज़ की गुणवत्ता तथा टंकण आदि भी सराहनीय हैं। आशा की जाती है कि श्री अशोक जी गौतम द्वारा परिश्रमपूर्वक तैयार की गई यह ग्रंथ-रचना पंचमहायज्ञ और वैदिक आचरण में रुचि रखने वाले सुधी पाठकों द्वारा भरपूर सराही जाएगी।

भावेश मेरजा

पुस्तक प्राप्त करने के लिए संपर्क करें- शांति धर्मी कार्यालय (94162 53826)

यशस्वी लेखक, सिद्धहस्त सम्पादक, ओजस्वी वक्ता

श्री पं. क्षितीश जी वेदालंकार

का सम्पूर्ण साहित्य संकलन प्रकाशित

1. **पं. क्षितीश वेदालंकार ग्रन्थावली- खण्ड-1, सिद्धान्त अंक**
   1. निज़ाम की जेल में, 2. आप्त राष्ट्रपुरुष, 3. दिव्य दयानन्द, 4. आर्यसमाज की विचारधारा, 5. ईश्वर संसार के प्रसिद्ध वैज्ञानिकों की दृष्टि में — पृष्ठ 569, मूल्य 500
2. **पं. क्षितीश वेदालंकार ग्रन्थावली- खण्ड-2, हिन्दी-हिन्दू, हिन्दुस्तान अंक**
   1. जातिभेद का अभिशाप, 2. हिन्दी ही क्यों ? 3. भारत को हिन्दू (आर्य) राष्ट्र घोषित करो, 4. कश्मीर : झुलसता स्वर्ग — पृष्ठ 474, मूल्य 500/-
3. **पं. क्षितीश वेदालंकार ग्रन्थावली- खण्ड-3, अभिनन्दन अंक**
   1. चयनिका, 2. राष्ट्रीय पत्रकारिता के पुरोधा — पृष्ठ 676, मूल्य 500/-
4. **पं. क्षितीश वेदालंकार ग्रन्थावली-खण्ड-4, यात्राएँ, उपन्यास एवं हास्य विनोद अंक**
   1. बांग्ला देश : स्वतंत्रता के बाद, 2. पंडिम के दुर्गम पथ पर, 3. उत्तराखण्ड के पथ पर, 4. स्वेतलाना, 5. गांधी जी का हास्य विनोद — पृष्ठ 440, मूल्य 500/-
5. **पं. क्षितीश वेदालंकार ग्रन्थावली-खण्ड-5, ललित साहित्य अंक**
   1. फिर इस अन्दाज से बहार आई, 2. ओ मेरे राजहंस, 3. देवता कुर्सी के — पृष्ठ 466, मूल्य 650-
6. **पं. क्षितीश वेदालंकार ग्रन्थावली- खण्ड-6, 'आर्य-जगत्' के अग्रलेख**
   1. हिन्द की चादर पर दाग, 2. राष्ट्रीय एकता की बुनियादें, 3. असलियत क्या है ? 4. क्षितीश जी के अन्य लेख — पृष्ठ 540, मूल्य 700/-
7. **पं. क्षितीश वेदालंकार ग्रन्थावली, खण्ड-7, राजनीति नहीं, राष्ट्रनीति** — पृष्ठ 584, मूल्य 700/-

पूरी ग्रंथावली एक साथ मँगाने पर 40 प्रतिशत छूट; साथ ही `तूफ़ान के दौर से पंजाब' की प्रति नि:शुल्क

प्राप्ति स्थान :-

अरविन्द प्रकाशन® प्रा०लि०

स्पोर्ट्स कॉम्प्लैक्स एन्क्लेव, दिल्ली रोड, मेरठ-250002

फोन (0121) 2521607, 4002779, 9927070730

ई-मेल : info@arvindprakashan.com वेब : arvindprakashan.com

शाखाएँ :-

- शिवम यशोदालाल कॉम्पलैक्स, ट्रांसपोर्ट नगर, गेट नं० 2 के सामने, जकारियापुर, पी०एस०-रामकृष्ण नगर, पटना मो. 9334482533, 9430312773
- न्यू पान दरीबा, टी०बी० क्लीनिक के सामने, चौपला रोड, बरेली फोन : 0581-2452767, मो. 9927070729
- 87/223 ए, आचार्य नगर, कानपुर मो. 7895124848